प्रेमचन्द के 'कर्मभूमि' उपन्यास के अंग्रेज़ी अनुवादों का तुलनात्मक अध्ययन

(A COMPARATIVE STUDY OF TWO ENGLISH TRANSLATIONS OF PREMCHAND'S 'KARMBHUMI')

एम.फ़िल.उपाधि हेतु प्रस्तुत लघु शोध-प्रबंध

शोध-निर्देशक

डॉ. रणजीत कुमार साहा

शोध-छात्रा

मनोरमा

भारतीय भाषा केन्द्र

भाषा, साहित्य एवं संस्कृति अध्ययन संस्थान

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय

नई दिल्ली-110067

2011

Centre of Indian Languages
School of Language, Literature & Culture Studies
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
JAWAHARLAL NEHRU UNIVERSITY
New Delhi-110067, INDIA

Dated 21/07/2011

DECLARATION

I declare that the work done in this Dissertation entitled "PREMCHAND KE 'KARMBHUMI' UPANYAS KE ANGREJI ANUVADON KA TULNATMAK ADHYAYAN" (A COMPARATIVE STUDY OF TWO ENGLISH TRANSLATIONS OF PREMCHAND'S 'KARMBHUMI') by me is an original research work and has not been previously submitted for any other degree in this or any other University / Institution.

Manorama
Manorama

(Research Scholar)

Dr. Ranjit Kr. Saha
(Supervisor)
CIL/SLL&CS

Prof. Krishnaswamy Nachimuthu
Chairperson
CIL/SLL &CS

श्रद्धेय बाबू-माई

दादा-दादी

माता-पिता

और

भाई सवीन्द्र सिंह

को

सादर

समर्पित

प्रस्थान से पूर्व

हिन्दी कथा-साहित्य में प्रेमचन्द एक सशक्त हस्ताक्षर हैं। प्रेमचन्द का साहित्य विविध रंगों से रँगी एक रंगोली की तरह है, जिसमें जीवनसंबंधी विविध रंग समाहित हैं। इन रंगों की चमक इतनी चटक है कि पाठक इससे सम्मोहित हुए बिना नहीं रह पाता है। प्रेमचन्द की रचनाएँ पाठकों के हृदय को छू लेती हैं और पाठक उनके रचना संसार में गोते लगाने लगता है। क्योंकि प्रेमचन्द की विशेषता है कि वह कथा लिखने के बजाय कहते हैं। लिखे हुए को पढ़ा जाता है और कहे हुए को सुना जाता है। पढ़े हुए से सुना हुआ मस्तिष्क पर ज़्यादा बलाघात करता है। इसीलिए प्रेमचन्द की रचनाओं का प्रभाव पाठक पर कहीं अधिक पड़ता है। इसी प्रभाव को अन्य भाषा-भाषियों तक पहुँचाने के लिए प्रेमचंद की रचनाओं के विभिन्न अनुवाद हो चुके हैं।

प्रेमचन्द के लेखनकाल के समय से आज के समय में काफ़ी बदलाव आ चुका है। आज से 75 वर्ष पूर्व, जब प्रेमचन्द लिख रहे थे, उस समय की परिस्थितियाँ, रहन-सहन और समाज भिन्न प्रकार का था। उनके समय की भाषा भी तत्कालीन परिस्थितियों और रहन-सहन के अनुरूप ही रचना में उतरकर पाठक के सामने आई है। उन्होंने विभिन्न प्रकार के शब्दों जैसे तत्सम, तद्भव, देशज, उर्दू-फ़ारसी, अंग्रेज़ी का प्रयोग किया है। यदि प्रेमचन्द चाहते तो एक सीधी-सपाट भाषा का प्रयोग अपनी रचनाओं में कर सकते थे, लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया, तो उसके पीछे ज़रूर कोई विशिष्ट कारण रहा होगा। सम्भवतः इसका कारण वह सांस्कृतिक तत्त्व हैं जो इनकी रचनाओं में मौजूद हैं। लेकिन प्रेमचन्द की वह कृतियाँ, जो पाठक को स्थान विशेष का रसास्वादन, कृति में प्रयुक्त पदों के माध्यम से कराती हैं- क्या वह अन्य भाषाओं के अनुवाद द्वारा संभव है? यह कहना या किसी निष्कर्ष पर पहुँचना बहुत कठिन कार्य है। परन्तु इस सच्चाई से भी इनकार नहीं किया जा सकता कि अनुवाद ने ही प्रेमचन्द की रचनाओं को विषम सांस्कृतिक पाठकों के लिए सुलभ बनाया।

मानव सभ्यता के विकासक्रम में, जब से विभिन्न सभ्यताओं के बीच व्यापारिक और अन्य क्रिया-कलापों हेतु सम्पर्क स्थापित हुआ, तभी से अनुवाद के उद्भव और महत्त्व को चिह्नित किया जा सकता है। हालाँकि भाषा तब अपने बीज रूप में ही थी और आपस में सम्पर्क स्थापित करने के लिए लोग संकेतों एवं चिह्नों का प्रयोग करते थे। लेकिन स्थान विशेष के

चिह्नों और संकेतों को अन्य स्थान के वासी नहीं समझ सकते थे। अतः यही से दो स्थानों के व्यक्तियों के बीच सम्पर्क सूत्र स्थापित करने के लिए अनुवाद की आवश्यकता महसूस की जाने लगी, जिसके फलस्वरूप अनुवाद एक ऐसे सेतु के रूप में विकसित हुआ जिसने स्रोत भाषा की परंपराओं, मान्यताओं और सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों को लक्ष्य भाषा में संप्रेषित करने का आवश्यक कार्य किया।

वर्तमान में अनुवाद 'ग्लोबल विलेज़' की अवधारणा को चरितार्थ करनेवाला माध्यम है। क्योंकि अनूदित साहित्य विविध संस्कृतियों से परिचय कराता है। पिज़्ज़ा, नूडल, पास्ता, मोमो आदि से जुड़ी विभिन्न भाषा संस्कृतियों को भारत में पल्लवित होते देखकर ऐसा प्रतीत ही नहीं होता है कि हम भारत में बैठे हैं या विदेश में। अनुवाद साहित्य ने ही प्रेमचन्द की रचनाओं को पहले से ही वैश्विक ख्याति प्रदान की है, जिससे लोग भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक संरचना से परिचित हुए और 'वैश्विक गाँव' की अवधारणा को बल मिला।

बचपन में पढ़ी कहानी 'ईदगाह' ने मेरे मन पर इतनी गहरी छाप छोड़ी कि प्रेमचन्द की रचनाओं को पढ़ने की मेरी ललक उत्तरोत्तर बलवती होती गई। मेरी इस उत्कट इच्छा ने एम. फ़िल. के इस लघु शोध-प्रबंध के विषय के चुनाव में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। निरंतर परिश्रम तथा ग्रामीण परिवेश ने मेरे दृष्टिकोण के निर्माण में और विचारों के विकास में पर्याप्त योगदान दिया है। प्रस्तुत लघु शोध-प्रबंध मेरे शोध विषय संबंधी चयन, दृष्टिकोण और विचारधारा का ही प्रतिफलन है।

समसपुर, जौनपुर का एक छोटा-सा गाँव है, जहाँ मैंने जन्म लिया। यह गाँव भी अन्य भारतीय गाँवों से अलग नहीं था। वही ताल-तलैया, वहीं मेड़ और पगडंडियाँ। उन्हीं पगडंडियों और खेत के मेड़ों पर गिरते-सँभलते मेरे नन्हें क़दमों ने बाद में उस मार्ग की तरफ़ अपना रुख़ कर लिया, जो जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय की तरफ़ जाता था, जहाँ शिक्षा प्राप्त करना किसी के लिए भी महत्त्व और सम्मान की बात है। सपने देखने की एक सीमा होती है, क्योंकि सभी सपने सच्चाई का रूप नहीं ले पाते हैं। सपनों की इस सीमा का अतिक्रमण करते हुए मैंने जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में पढ़ने का अपना स्वप्न कठिन परिश्रम से साकार करके अपने माता-पिता और सगे-संबंधियों को आह्लाद से भर दिया।

प्रस्तुत लघु शोध-प्रबंध के प्रथम अध्याय में तीन भाग हैं। पहला भाग प्रेमचन्द का व्यक्तित्व और उनके उपन्यास है। जिसमें प्रेमचन्द की जीवन यात्रा और उनके द्वारा रचित उपन्यासों का संक्षिप्त वर्णन किया गया है। दूसरा भाग 'कर्मभूमि' की अंग्रेज़ी अनुवादिका रीतारानी पालीवाल का साहित्यिक परिचय है तथा तीसरा भाग 'कर्मभूमि' के एक अन्य अंग्रेज़ी अनुवादक ललित श्रीवास्तव के परिचय से संबंधित है।

द्वितीय अध्याय में प्रेमचन्द की कृति 'कर्मभूमि' की अन्तर्वस्तु वर्णित है, जिसके पाँच भाग हैं। इन भागों में 'कर्मभूमि' में उल्लेखित समस्याओं का परिचयात्मक वर्णन किया गया है।

तृतीय अध्याय पाठ आधारित परम्परागत शब्द है। जिसमें 'कर्मभूमि' में आये विभिन्न प्रकार के पारंपरिक शब्दों और उनके लिए दोनों अनुवादकों द्वारा प्रस्तुत अनुवादों को विभिन्न श्रेणियों में वर्गीकृत करके तुलनात्मक अध्ययन के द्वारा यह जानने का प्रयास किया गया है कि 'कर्मभूमि' उपन्यास परम्परागत एवं व्यवहार के स्तर पर प्रयुक्त शब्दों की दृष्टि से कितना सम्पन्न है और दोनों अनुवादकों ने मूल में व्यवहृत शब्दों के लिए किस प्रकार का अनुवाद किया है।

चतुर्थ अध्याय अनूदित कृतियों का मूल पाठ के साथ तुलनात्मक अध्ययन है, जिसके दो भाग हैं। पहला भाग 'कर्मभूमि' के अंग्रेज़ी अनुवादों का भाषिक विश्लेषण के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन है जबकि दूसरा भाग 'कर्मभूमि' के अंग्रेज़ी अनुवादों का सांस्कृतिक विश्लेषण के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन से संबंधित है।

अक्षरों ने शब्दों का, शब्दों ने वाक्यों का और अन्ततः वाक्यों ने मिलकर इस लघु शोध-प्रबंध का आकार लिया। चाक पर मिट्टी रख देने पर वह कोई-न-कोई आकृति बना ही देती है परन्तु सही आकृति का निर्माण कुम्हार के दिशा-निर्देशन से ही संभव है। मेरे पास मिट्टी-रूपी विचार की कमी न थी परन्तु उन विचारों को सही आकृति मेरे शोध-निर्देशक डॉ. रणजीत कुमार साहा ने प्रदान की। प्रेमचन्द पर शोधकार्य करने की मेरी इच्छा को देखते हुए उन्होंने मुझे 'कर्मभूमि' पर शोधकार्य करने का सुझाव दिया। अपने शोध-निर्देशक के प्रति आभार व्यक्त करना धृष्टता होगी, परन्तु यह कहना अनुचित न होगा कि उनकी सहृदयता और उदारता ने मुझे निरंतर प्रोत्साहित किया। उन्होंने मेरी छोटी-सी-छोटी ग़लती की तरफ़ ध्यान दिलाया और इस लघु शोध-प्रबंध को व्यवस्थित एवं परिष्कृत करने में मदद की।

इस शोध कार्य में भाई सवीन्द्र सिंह की निरंतर प्रेरणा और सहयोग की मैं कितनी ऋणी हूँ, इसकी स्वीकृति शब्दों से नहीं, मौन से ही जताना उचित होगा।

दादा-दादी, पापा-मम्मी, बड़े पापा-मम्मी, चाचा-चाची, दीदी ऊषा सिंह और जीजा नरेश कुमार जी के आशीर्वाद तथा समस्त भाई-बहनों –मैं किस-किस का नाम लूँ –के बिना यह लघु शोध-प्रबंध का कार्य संपन्न होना संभव न था। मित्रों में अंशू,सिम्मी,शिल्पी और उसकी बेटी श्रेया का भी सहयोग रहा। इस दौरान मुझे अपने सहयोग द्वारा चिन्तामुक्त रखने के लिए टंकक प्रदीप का भी आभार व्यक्त करती हूँ।

अन्त में, उस परमसत्ता का स्मरण जो हर जगह व्याप्त है तथा जिसकी इच्छा के बिना पत्ता भी नहीं हिलता है । यह लघु शोध-प्रबंध उसकी सदिच्छा का ही परिणाम है और उसके चरणों में समर्पित है।

शोधार्थी,

मनोरमा

विषयानुक्रम

पृ. सं

प्रथम अध्याय : 1-11

(क) प्रेमचन्द का व्यक्तित्व और उनके उपन्यास

(ख) अनुवादिका रीतारानी पालीवाल का साहित्यिक परिचय

(ग) अनुवादक ललित श्रीवास्तव का परिचय

द्वितीय अध्याय : प्रेमचन्द की कृति 'कर्मभूमि' की अन्तर्वस्तु 12-27

(क) 'कर्मभूमि' और स्वाधीनता आन्दोलन

(ख) 'कर्मभूमि' में किसान और किसान आन्दोलन

(ग) 'कर्मभूमि' में स्त्री चेतना

(घ) हिन्दू-मुस्लिम संबंध

(ङ) 'कर्मभूमि' में प्रेमचन्द की दलित चेतना

तृतीय अध्याय : पाठ आधारित परम्परागत शब्दों की सूची 28-49

(क) धार्मिक पद

(ख) सामाजिक पद

(ग) सांस्कृतिक पद

(घ) आर्थिक पद

(ङ) अन्य पद (खान-पान, पहनावा/वेशभूषा, मनोरंजन, माप-तौल, हिन्दी महीनों के नाम, रहन-सहन/परिवहन के साधन, उपकरण)

चतुर्थ अध्याय : अनूदित कृतियों का मूल पाठ के साथ तुलनात्मक अध्ययन 50-105

(क) 'कर्मभूमि' के अंग्रेज़ी अनुवादों का भाषिक विश्लेषण के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन

(ख) 'कर्मभूमि' के अंग्रेज़ी अनुवादों का सांस्कृतिक विश्लेषण के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन

उपसंहार 106-112

ग्रंथानुक्रम 113-118

प्रथम अध्याय

(क) प्रेमचन्द का व्यक्तित्व और उनके उपन्यास

(ख) अनुवादिका रीतारानी पालीवाल का साहित्यिक परिचय

(ग) अनुवादक ललित श्रीवास्तव का परिचय

प्रेमचन्द का व्यक्तित्व और उनके उपन्यास

प्रेमचन्द का व्यक्तित्व किसी तिलिस्म से कम नहीं था। यह उनके व्यक्तित्व का ही प्रभाव था कि अमृतराय को कहना पड़ा कि "इस आदमी की छाया से निकलने में मुझे उम्र के सत्तर साल देने पड़े।"[1]

प्रेमचन्द का जन्म लमही में सावन बदी 10 संवत् 1937 (शनिवार 31 जुलाई,सन् 1880) को हुआ था। उनके पिता ने इनका नाम 'धनपत' और ताऊ ने 'नवाब' रखा। इनके पिता अजायबलाल डाकमुंशी थे तथा उनकी माता का नाम आनन्दी था, जो देखने में अत्यन्त ही सुन्दर थीं। प्रेमचन्द का बचपन बड़े ही आराम से और मौज़-मस्ती में बीता। वे बचपन में बहुत नटखट थे और एक बार खेल-खेल में उन्होंने एक लड़के का कान काट दिया था। वे कभी ऊख तो कभी मटर उखाड़ लाते थे। ढेले से आम तोड़ना इनकी दिनचर्या का अंग था। छह वर्ष की उम्र में इनके जीवन में कजाकी नाम का हरकारा आया था और वह उनकी कहानी 'कजाकी' का प्रमुख पात्र बन गया। इस दौर की स्मृतियों पर आधारित इनकी कई रचनाएँ जैसे 'चोरी' रामलीला' 'कजाकी' तथा 'होली की छुट्टी' हैं।

प्रेमचन्द की माँ आनन्दी सुन्दर और स्वभाव से मृदुभाषी थीं तथा वह भी अजायबलाल की तरह संग्रहणी की पुरानी मरीज़ थीं और प्रेमचन्द जब सिर्फ़ आठ वर्ष के थे तभी उनका देहांत हो गया। इनकी माता के देहांत के दो वर्ष के बाद पचास वर्ष की अवस्था में इनके पिता ने दूसरा विवाह कर लिया। प्रेमचन्द को अपनी विमाता, जिन्हें वह चाची कहते थे, से कभी भी मातृसुलभ स्नेह नहीं प्राप्त हुआ। पारिवारिक परिस्थितियों के कारण ही मातृहीन बालकों के लिए इनके मन में विशेष अनुराग था। प्रेमचन्द की पत्नी शिवरानी देवी ने 'प्रेमचन्द घर में' उल्लेख किया है कि उनकी विमाता उन्हें दूध-घी से वंचित रखती थीं। उनके कठोर व्यवहार के कारण प्रेमचन्द के मन में घर के लिए विरक्ति हो गयी। समय बीतते परिस्थितियाँ कुछ ऐसी बनीं कि पुस्तकें ही प्रेमचन्द की साथी बन गयीं। प्रेमचन्द ने अपनी सबसे पहली रचना अपने रिश्ते के एक मामू साहब के प्रेम-प्रसंग को आधार बनाकर लिखी थी। प्रेमचन्द अभी पन्द्रह वर्ष के ही थे और नवीं कक्षा में पढ़ते थे। इनके पिता ने नवाब के नाना (विमाता के पिता) की मदद से इनका विवाह कर दिया। नवाब अपने

---

[1] डॉ. शैलेन्द्र कुमार त्रिपाठी, (संपादक) सरयू धारा, प्रेमचन्द अंक, पृ. 1

विवाह को लेकर बहुत खुश थे परन्तु इनकी पहली पत्नी के विषय में अमृतराय ने लिखा है कि ''घर पहुँचकर उसने अपनी बीबी की सूरत जो देखी तो उसका खून सूख गया।''[1]

इस विवाह से अजायबलाल बहुत आहत हुए और विवाह के डेढ़ वर्ष के भीतर ही उनकी मृत्यु हो गई और घर की सारी ज़िम्मेदारी प्रेमचन्द के ऊपर आ गयी। पिता की मृत्यु के कारण नवाब उस बार मैट्रिक की परीक्षा न दे सके और अगले वर्ष उन्होंने द्वितीय श्रेणी में मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की, जिसके कारण उन्हें बनारस के क्वीन्स कॉलेज में प्रवेश मिलना संभव ना था। उसी वक़्त बनारस में हिन्दू कॉलेज खुला था, जहाँ योग्यता की जाँच के दौरान वह अंग्रेज़ी में पास हो गये परन्तु गणित के अध्यापक ने असंतोषजनक लिख दिया। नवाब ने बनारस में रहकर ही गणित को सुधारने का प्रयास किया, परन्तु इस दौरान इन्होंने उपन्यास ही पढ़ा।

एक बार जब उन्हें पैसे की ज़रूरत थी और वे एक किताब की दुकान पर चक्रवर्ती गणित की कुंजी बेचने गये थे तो चुनार मिशन स्कूल के हेडमास्टर ने उन्हें अठ्ठारह रुपये वेतन में नौकरी का प्रस्ताव दिया जिसे इन्होंने सहर्ष स्वीकार कर लिया। चुनार में कुछ वर्ष कार्य के बाद इन्हें स्कूल से निकाल दिया गया। इसके पश्चात् 2 जुलाई 1900 ई. को बहराइच के ज़िला स्कूल में मास्टर के पद पर नियुक्ति से उनकी सरकारी नौकरी का सिलसिला शुरू हुआ। इस दौरान उन्होंने कई स्थानों पर नौकरी की। 8 अक्टूबर, 1903 ई. को 'आवाज़ए-ख़ल्क़' में उनका प्रथम उर्दू उपन्यास 'असरारे मआबिद' छपना शुरू हुआ। 25 वर्ष की उम्र में इन्होंने मुंशी देवीप्रसाद की बालविधवा पुत्री शिवरानी देवी से विवाह करके अपने प्रगतिशील दृष्टिकोण का परिचय दिया।

प्रेमचन्द पहले नवाबराय के नाम से भी लिखा करते थे। उनकी 'सोज़ेवतन' में छपी कुछ कहानियों के कारण ज़िलाधीश को पता चल चुका था कि इसके वास्तविक लेखक धनपतराय हैं और वे एक सरकारी मुलाज़िम हैं। चूँकि ज़िलाधीश का हुक्म था कि बिना उनकी अनुमति के कुछ न लिखा जाए। इसलिए इन्होंने अपना नाम नवाबराय से बदलकर प्रेमचन्द रख लिया जिससे उनकी रचनाओं पर प्रतिबंध न लगाया जा सके। इस घटना से साहित्य में 'प्रेमचन्द' नाम का जन्म हुआ और 'प्रेमचन्द' नाम से उनकी पहली कहानी 'बड़े घर की बेटी' प्रकाशित हुई।

जीवन के तमाम उतार-चढ़ावों का सामना करते हुए प्रेमचन्द का स्वास्थ्य बिगड़ने लगा और वे अक्सर बीमार रहने लगे। 14 फ़रवरी, 1921 को उन्होंने गाँधी के असहयोग आंदोलन से प्रेरित होकर

---

[1] अमृतराय– प्रेमचन्द : क़मल का सिपाही, पृ. 34

सरकारी नौकरी से अपना त्याग-पत्र दे दिया और पूरी तरह से साहित्य सृजन में लग गये। इस दौरान उन्होंने सरस्वती प्रेस से 'हंस' नामक मासिक पत्रिका निकाली। सन् 1934 में इन्होंने बम्बई के 'अजंता सिनेटोन' फ़िल्म कम्पनी में कार्य शुरू किया परन्तु प्रेमचन्द का अन्त समय बड़ा ही कष्टदायी था। उन्हें जलोदर नामक बिमारी हो गयी थी जिसके कारण उन्हें खून की क़ै हो जाया करती थी। अपनी इस अस्वस्थता के दौरान भी लेखन से मुँह नहीं मोड़ पाये बल्कि वह बीच-बीच में 'मंगलसूत्र' लिखते रहे, जो अधूरा ही रहा।

8 अक्टूबर, 1936 को प्रातः सात बजे इस महान साहित्यकार ने अपनी आँखें मूँद लीं। इनकी मृत्यु के विषय में रवीन्द्रनाथ ने कहा - "एक रतन मिला था तुमको, तुमने खो दिया।" [1]

सेवासदन

(बाज़ारे हुस्न)

पहले उर्दू में लिखा गया परन्तु प्रकाशित हुआ हिन्दी में। इस उपन्यास का प्रकाशन 1919 ई. में माना जाता है। 'सेवासदन' में प्रेमचन्द ने मध्यवर्गीय सामाजिक जीवन की समस्याओं को उठाया है। समाज के विविध वर्गों के नैतिक पतन के फलस्वरूप होनेवाले दुष्परिणामों और उनके मूल कारणों पर भी प्रकाश डाला है। दहेज प्रथा, अनमेल विवाह, वेश्या समस्या आदि पर जो विचार प्रेमचन्द ने प्रस्तुत किया है, वह उनके प्रगतिशील दृष्टिकोण का द्योतक है। इसमें इन्होंने सामाजिक यथार्थ का चित्रण किया है किन्तु वेश्या समस्या के निर्मूलन हेतु इन्होनें 'सेवासदन' की स्थापना करके अपनी आदर्शोन्मुखी दृष्टि का परिचय दिया। 'सेवासदन' के प्रमुख चरित्रों में दरोगा कृष्णचन्द्र और सुमन उल्लेखनीय हैं। प्रेमचन्द ने दरोगा कृष्णचन्द्र के चरित्र के द्वारा ईमानदार व्यक्ति के दारुण जीवन का चित्र प्रस्तुत किया है। सुमन दहेज जैसी कुप्रथा के अभिशाप का प्रतीक है। 'सेवासदन' समस्यापरक दृष्टिकोण से लिखा गया एक अत्यंत प्रभावशाली उपन्यास है।

प्रेमाश्रम

(गोशए आफ़ियत)

सर्वप्रथम उर्दू में लिखा गया परन्तु प्रकाशित हिन्दी में हुआ। इसका प्रकाशन सन् 1921 में हुआ। यह उपन्यास अपने पूर्व के उपन्यासों की तुलना में अधिक विस्तृत है। ग्रामीण और नागरिक जीवन के अनेक चरित्रों को इस उपन्यास में दर्शाया गया है। 'प्रेमाश्रम' में मुख्य रूप से ग्रामीण जीवन की

---

[1] अमृतराय– प्रेमचन्द : क़मल का सिपाही, पृ. 652

समस्याओं को ही उठाया गया है। किसानों की दुर्दशा, ज़मींदारों का अत्याचार और ग्राम-सुधार के उपाय इस उपन्यास के प्रमुख विषय क्षेत्र हैं।

"प्रेमाश्रम किसान जीवन का महाकाव्य है। उसमें उस जीवन का एक पहलू नहीं दिखाया गया, वह एक विशाल नदी की तरह है जिसमें मूल धारा के साथ आस-पास के नालों का पानी, जड़ से उखड़े हुए पुराने खोखले पेड़ और खेतों का घास-पात भी बहता दिखाई देता है।" [1] सामन्तवादी व्यवस्था के पतन चिह्न इस उपन्यास में स्पष्ट दिखाई देते हैं।

वरदान

यह 'जलवए ईसार' का हिन्दी रूपान्तर है। इसका प्रकाशन 1921 में ही ग्रंथ भण्डार, बम्बई से हुआ। इस उपन्यास में प्रेमचन्द ने ग्रामीण जीवन के अभावों और विडम्बनाओं का चित्रण विस्तार से किया है। इन्होंने 'वरदान' में भारतीय समाज में व्याप्त वर्ग असमानता और उसके दुष्परिणामों का उद्‌घाटन किया है। आधुनिक समाज में प्रेम और विवाह से संबंधित समस्या को उन्होंने बाल्यावस्था से परिचित दो प्रेमियों की गाथा के द्वारा प्रस्तुत किया है। उन दोनों के बीच की आर्थिक असमानता, माता-पिता एवं समाज के रूढ़िवादी दृष्टिकोण के कारण भयानक बिडंबना का कारण बनती है। इस उपन्यास में 'सेवासदन' की तुलना में वैचारिक और अभिव्यक्तिगत प्रौढ़ता का अभाव है।

रंगभूमि

(चौगाने हस्ती)

पहले यह उर्दू में लिखा गया था लेकिन छपा हिन्दी में। 1924 में प्रकाशित 'रंगभूमि' स्वाधीनता आंदोलन के विविध कोणों को चित्रित करने वाला उपन्यास है। इस उपन्यास में तत्कालीन भारत के राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक समस्याओं का जीवंत चित्रण है। 'रंगभूमि' का समय राष्ट्रीय गुलामी का समय था। इस समय पूँजीवादी एवं सामंतवादी शक्तियों का गठजोड़ आम आदमी का भयानक शोषण कर रहा था। 'रंगभूमि' की कथा अंधे भिखारी सूरदास को लेकर रची गई है। जिसके पास 10 बीघा पुश्तैनी ज़मीन है। वह अपनी तथा गाँव की ज़मीन के लिए मरते दम तक लड़ता है। उसकी ज़मीन पर जॉन सेवक एक कारख़ाना स्थापित करना चाहता था परन्तु सूरदास अपनी ज़मीन को नहीं बेचना चाहता था। "वह केवल इसलिए इनकार नहीं करता कि ढोर-डंगरों को घास चरने को न मिलेगी, बल्कि इसलिए भी कि कारख़ाना खुलने पर गाँवों की सहज संस्कृति

---

[1] डॉ. रामविलास शर्मा – प्रेमचन्द और उनका युग, पृ. 45

नष्ट हो जाएगी और दुराचार पनपेगा। इस प्रकार वह पूँजीवाद और पश्चिमीकरण दोनों के विरुद्ध संघर्ष का स्वर बन जाता है।'' [1] प्रेमचन्द ने 'रंगभूमि' में सामंतवर्ग के वर्गीय चरित्र को उभारा है। भरत सिंह देशभक्ति छिपकर करते हैं और सिर्फ़ उतनी ही जिससे उनको कोई नुक़सान न हो। विनय एक सम्पन्न घराने का पात्र है और बहुत ही क्रांतिकारी दिखाई देता है। परन्तु इस उपन्यास में उसके पारिवारिक सामंती संस्कारों को भी उजागर किया गया है। महेन्द्र कुमार जनसंघर्ष के विरुद्ध जॉन सेवक का साथ देता है। सामाजिक धरातल पर प्रेमचन्द ने सोफिया और सुभागी के माध्यम से नारी शोषण की समस्या को भी उठाया है। 'रंगभूमि' के केन्द्र में 'पाण्डेपुर' गाँव है। आर्थिक पहलुओं का चित्रण 'रंगभूमि' की विशेषता है। गाँव की आर्थिक दुर्दशा और औद्योगीकरण की समस्या विशेष उल्लेखनीय है।

कायाकल्प

(पर्दए मजाज़)

यह उपन्यास मूल रूप से हिन्दी में लिखा गया था। प्रारंभ में इस उपन्यास के ''तीन नाम रखे गये थे - असाध्य साधना, मायास्वप्न, आर्तनाद।'' [2]

इसका प्रकाशन 1926 में हुआ। प्रेमचन्द ने अपने अन्य उपन्यासों से अलग इस उपन्यास में नवीन ढंग से कुछ असामान्य प्रकार की विषयवस्तु को प्रस्तुत किया है। उन्होंने सर्वप्रथम कुछ आध्यात्मिक सूत्रों को उठाया है। पूर्वजन्म और भावीजन्म के कल्पनात्मक चित्र इस उपन्यास में कर्म और संस्कारों के आधार पर खींचे गए हैं। इस उपन्यास में प्रेमचन्द ने आध्यात्मिक पृष्ठभूमि पर ही रानी देवप्रिया और उसके पति के चरित्र के माध्यम से जन्म-मरण के रहस्यों पर प्रकाश डाला है। इस उपन्यास में साम्प्रदायिकता को भी एक राजनीतिक प्रश्न के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इसमें प्रेमचन्द का दृष्टिकोण मूलतः सुधारवादी रहा है। यशोदानंदन और ख़्वाजा महमूद जैसे पात्रों की सर्जना प्रेमचन्द ने इसी आदर्शपरक उद्देश्य से की है।

निर्मला

नवम्बर 1925 से नवम्बर 1926 तक 'चाँद' पत्रिका में प्रकाशित हुआ। यह एक समस्या प्रधान उपन्यास है। समस्या है दहेज प्रथा की कुरीति। 'निर्मला' में निर्मला नाम की किशोरी कन्या का विवाह एक दोहाजू व्यक्ति तोताराम से हो जाता है। उपन्यासकार ने दहेज के अभाव में इस अनमेल

---

[1] दयानंद पाण्डेय (संपादक) - प्रेमचन्द : व्यक्तित्व और रचना दृष्टि, पृ. 167

[2] अमृतराय– प्रेमचन्द : कमल का सिपाही, पृ. 655

विवाह को इतने क्रूर और कठोर अभिशाप के रूप में चित्रित किया है कि पाठक स्तब्ध हो जाता है।

पन्द्रह वर्षीया निर्मला के पिता की असमय मृत्यु के पश्चात् उसकी माँ उसका विवाह एक प्रौढ़ विधुर से कर देती है। उसके पति तोताराम को यह शक होता है कि निर्मला का मंशाराम, जो कि तोताराम का बड़ा लड़का है, के साथ अनुचित संबंध है। इस कारण मंशाराम घर छोड़कर हॉस्टल में रहने लगता है और अंततः बीमार होकर प्राण त्याग देता है। कुछ दिनों बाद मुंशी तोताराम का दूसरा लड़का भी उनसे संबंध तोड़ लेता है और अंततः उनका तीसरा लड़का किसी साधु के साथ चला जाता है। जिसे खोजने के लिए तोताराम भी एक दिन चले जाते हैं। निराश निर्मला बीमार होकर मर जाती है। "निर्मला प्रेमचन्द के कथा-साहित्य के विकास में एक मार्ग चिह्न है। यह पहला उपन्यास है जिसमें उन्होंने किसी सेवासदन या प्रेमाश्रम का निर्माण करके पाठक को झूठी सांत्वना नहीं दी।"[1]

प्रतिज्ञा

(बेवा)

जनवरी 1927 से नवम्बर 1927 के मध्य 'चाँद' में प्रकाशित हुआ। 'अमृतराय ने लिखा है कि "प्रेमा के ही कथानक को लेखक ने फिर से उठाया, पर कथा के विकास में महत्त्वपूर्ण अन्तर आ गया है।"[2] 'प्रतिज्ञा' एक सामाजिक समस्या प्रधान उपन्यास है जिसमें प्रेमचन्द ने विधवा विवाह की समस्या को उठाया है। एक तरफ़ जहाँ वह पूर्णा के माध्यम से विधवा के जीवन की विडम्बना पर प्रकाश डालते हैं वहीं दूसरी ओर वह सुमिता के माध्यम से नारी के विद्रोही रूप को चित्रित्र करते हैं। "यह भारतेन्दुयुगीन सुधारवादी उपन्यासों की परंपरा में आने वाली कृति है, जिसमें लेखक ने विधवा विवाह का समर्थन किया है और विधवाओं के लिए आश्रमों का विधान किया है।"[3]

प्रेमचन्द ने इस उपन्यास में विधवाओं की समस्या को बड़ी संजीदगी के साथ उभारा है। परन्तु उनका दृष्टिकोण मूल रूप से आदर्शवादी रहा है। उन्होंने विधवा समस्या के समाधान के लिए कोई क्रांतिकारी क़दम नहीं उठाया बल्कि आत्महत्या करने को अग्रसर पूर्णा को उठाकर एक वनिता आश्रम में रखकर ही अपने कार्यों से इतिश्री कर ली है।

---

[1] डॉ. रामविलास शर्मा – प्रेमचन्द और उनका युग : पृ. 62

[2] अमृतराय– प्रेमचन्द : क़मल का सिपाही, पृ. 655

[3] डॉ. प्रतापनारायण टंडन – प्रेमचन्द, पृ. 47

ग़बन

अमृतराय ने इस उपन्यास का प्रकाशन 1931 ई. में सरस्वती प्रेस से माना है। प्रेमचन्द ने अपने अन्य उपन्यासों की तरह इस उपन्यास में भी कुछ सामाजिक समस्याओं को उठाया है परन्तु इसमें रोचकता कुछ अधिक है। ग़बन में मध्यवर्गीय समाज की आर्थिक स्थिति को बड़ी संजीदगी के साथ उभारा गया है। जालपा और रमानाथ के चरित्र के द्वारा प्रेमचन्द ने उपन्यास में सजीवता भर दी है। इस उपन्यास में लेखक ने संयुक्त परिवार की समस्या को भी उठाया है। रतन और वकील साहब के माध्यम से इन्होंने संयुक्त परिवार के खोखलेपन की ओर संकेत दिया है। प्रेमचन्द के अन्य उपन्यासों की तुलना में यह उपन्यास अधिक मनोवैज्ञानिक और यथार्थपरक है। रमानाथ मध्यवर्गीय चरित्र है। एक ओर उसकी महत्त्वाकांक्षा है तो दूसरी ओर उसकी आर्थिक असमर्थता। जालपा की गहनों के प्रति तीव्र आकांक्षा उसकी परेशानियों को और बढ़ा देती है। परन्तु बाद में अपने स्वाभाविक नारीत्व गुणों के कारण जब वह वास्तविकता से परिचित होती है तो अपने समस्त गहनों को बेचकर पति के सम्मान की रक्षा करती है।

कर्मभूमि

(मैदाने अमल)

अमृतराय के अनुसार इसका प्रकाशन अगस्त 1932 ई. में हुआ। इस उपन्यास का फलक बहुत विस्तृत है। अमरकांत इसका प्रमुख पात्र है, जो बिना धर्म की परवाह किये एक प्रेमी की तरह सकीना से प्यार करता है तथा गाँधी की तरह दलितों की समस्या को उठाता है और किसानों के हितार्थ लगानबंदी आंदोलन चलाता है। प्रेमचन्द ने इस उपन्यास में अपनी उस अद्‌भुत लेखनक्षमता का परिचय दिया है, जो समाज में सदियों से परत-दर-परत जमा होती खोखली मान्यताओं के ताने-बाने को तोड़ने का प्रयास करती है।

गोदान

(गऊदान)

इस उपन्यास का प्रकाशन जून 1936 ई. में हुआ। यह उपन्यास किसान जीवन की महागाथा है। इस उपन्यास का प्रमुख पात्र होरी है जो जीवन भर गाय पालने की अभिलाषा लिये रहता है और अन्त में एक गाय की लालसा में ही अपने प्राण त्याग देता है। प्रेमचन्द ने इस उपन्यास में गाँव तथा शहर दोनों के बीच के सम्पर्क सूत्र को भी चिह्नित किया है। अगर 'पूस की रात' प्रेमचन्द के लेखन की एक झलक थी तो 'गोदान' उसका जीवंत चलचित्र है। होरी के जीवन का चित्रण करने में

इन्होंने अपने सम्पूर्ण जीवन के अनुभव का उपयोग किया है। यही कारण है कि 'गोदान' का होरी भारतीय किसान का प्रतीक और कालजयी पात्र बन गया है।

मंगलसूत्र

यह उपन्यास एक अपूर्ण उपन्यास है जिसे प्रेमचन्द ने अपनी बीमारी के दौरान लिखा था। लेकिन वे इसे पूरा नहीं कर पाए। बाद में इसको अमृतराय ने पूरा किया। इसका प्रकाशन 1948 ई. में हुआ।

अनुवादिका रीतारानी पालीवाल का साहित्यिक परिचय

प्रोफ़ेसर रीतारानी पालीवाल एक प्रतिष्ठित अनुवादविद, कवयित्री और साहित्यिक आलोचक हैं। आप अनुवाद के क्षेत्र में एक अनुवादिका और अनुवाद विज्ञान की अध्यापिका के रूप में पिछले 35 वर्षों से कार्य कर रही हैं।

रीतारानी पालीवाल का जन्म 3 सितम्बर 1949, खैरगढ़, उत्तर प्रदेश में हुआ था। इन्होंने हिन्दी तथा अंग्रेज़ी विषय से कला परास्नातक किया और नाटक तथा रंगमंच पर हिन्दी में पी-एच.डी. एवम् डी. लिट्. की उपाधि प्राप्त की। संप्रति आप इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली में हिन्दी विभाग में प्रोफ़ेसर हैं तथा मानविकी स्कूल की निदेशक हैं। आपके अध्ययन अध्ययापन एवं लेखन के वृहत् क्षेत्र के अन्तर्गत नाटक, कविता, तुलनात्मक साहित्य, अनुवाद, जापानी साहित्य, हिन्दी भाषा और साहित्य, रंगमंच और संस्कृति आते हैं।

पालीवाल जी ने कई हिन्दी कविताओं का अनुवाद अंग्रेज़ी में किया है। इसके अतिरिक्त आपने कई जर्नल और समाचार-पत्रों के लिए लेख लिखा है। साथ ही, आप शैक्षिक मीडिया कार्यक्रमों से भी जुड़ी हुई हैं। आपने जापानी कविताओं और लोक कहानियों का भी अनुवाद किया है। आपकी कुछ प्रमुख कृतियाँ उल्लेखनीय हैं-

(1) रंगमंच नया परिदृश्य

(2) अनुवाद प्रक्रिया

(3) रंगमंच और जयशंकर प्रसाद के नाटक

(4) अनुवाद की सामाजिक भूमिका

(5) अनुवाद प्रक्रिया और परिदृश्य

(6) आहट (कविता संग्रह)

(7) यूनानी और रोमी काव्यशास्त्र

(8) अनुवाद और भाषिक संस्कृति हिन्दी के प्रयोजनपरक संदर्भ

(9) जापानी रंग-परंपरा

अनुवाद -

(1) Munshi Premchand's Karmabhoomi

(2) जापान की 'मन्योशु' कविताएँ

लेख -

(1) जापानी कविताओं का हिन्दी में अनुवाद; साहित्य अमृत में प्रकाशित, जनवरी 2005, फरवरी 2005 और मई 2005

(2) आर एन टी; जनसत्ता, 13 जनवरी 2005

(3) को कही सके बरेन सो; जनसत्ता, 19 जनवरी 2005

(4) विजयदेव नारायण साही की हिन्दी कविताओं का अंग्रेज़ी में अनुवाद; सृजन संवाद में प्रकाशित, अंक 4-5 मई 2005

पुरस्कार -

भारतीय अनुवाद परिषद् द्वारा, रीतारानी पालीवाल की पुस्तक 'अनुवाद प्रक्रिया और परिदृश्य' के लिए वर्ष 2004-05 का नातालि पुरस्कार प्रदान किया गया।

अनुवादक ललित श्रीवास्तव का परिचय

ललित श्रीवास्तव जैविक विज्ञान जगत से जुड़े एक प्रसिद्ध व्यक्तित्व हैं। वे कनाडा के सिमोन फ्रेज़र विश्वविद्यालय में बायोलॉजिकल विज्ञान विभाग में प्रोफ़ेसर हैं। प्रेमचन्द के 'कर्मभूमि' उपन्यास का अंग्रेज़ी अनुवाद उनका पहला साहित्यिक कार्य है। उनके कई शोधपत्र, किताबें और मोनोग्राफ (विनिबंध) छप चुके हैं।

ललित श्रीवास्तव ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से बी.एस.सी. तथा एम.एस.सी. किया और कैलिफ़ोर्निया विश्वविद्यालय से इन्होंने पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। श्रीवास्तव जी की स्नातक और परास्नातक स्तर की शिक्षा इलाहाबाद विश्वविद्यालय से होने के कारण इनकी हिन्दी तथा बनारस के आस-पास बोली जानेवाली भाषा पर विशेष पकड़ है।

ललित श्रीवास्तव के कुछ प्रमुख प्रकाशन उल्लेखनीय हैं -

1. Srivastava, L. M. and K.A. Sechley. 1991 in search of gibberellin receptor. Proc. Iowa Academy Science 98:51-62

2. Srivastava, L. M. & Meng. J. K. G. 1987. Chemical characterization of floridosides from Porphyra perforate. Carbohyd Res 161: 171-189

3. Srivastava, L.M. and Yalpani, N. 1985. Competition for in vitro [3H]-gibberell in A4 binding in cucumber by gibberellins and their derivatives. Plant Physiol. 79:963-967

4. Nereocystis luetkeana. Can. J. Bot. 62: 664-670

5. Srivastava. L. M., Keith, B. S., Brown and 1982, In vitro binding of gibberellin A4 to extracts of cucumber using DEAE-cellulose filters. Proc. Natl. Acad. Sci. U.S.A. 79:1515-1519.

द्वितीय अध्याय

प्रेमचन्द की कृति 'कर्मभूमि' की अन्तर्वस्तु

(क) 'कर्मभूमि' और स्वाधीनता आन्दोलन

(ख) 'कर्मभूमि' में किसान और किसान आन्दोलन

(ग) 'कर्मभूमि' में स्त्री चेतना

(घ) हिन्दू-मुस्लिम संबंध

(ङ) 'कर्मभूमि' में प्रेमचन्द की दलित चेतना

प्रेमचन्द की कृति 'कर्मभूमि' की अन्तर्वस्तु

'कर्मभूमि' 1932 ई. में प्रेमचन्द द्वारा लिखा गया एक ऐसा उपन्यास है। जिसमें तत्कालीन मुद्दों को पूरी संजीदगी और संवेदना के साथ रेखांकित किया गया है। उस समय राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य पर घटित शायद ही ऐसी कोई घटना हो, जिसका उल्लेख करने में प्रेमचन्द से चूक हुई हो। इसलिए यह कहना उचित ही होगा कि प्रेमचन्द जहाँ राष्ट्र चेतना के रूप में राष्ट्रीय पटल पर घटने वाली प्रत्येक घटना के प्रति सजग थे वहीं पर उनकी विश्वचेतना 1929-30 की आर्थिक मंदी के दुष्प्रभावों से भी अछूती नहीं थी। प्रेमचन्द सब कुछ देखते और सुनते हैं तथा हृदय की गहराइयों से मानवीय संवदेना को महसूस करते हैं।

प्रेमचन्द ने जहाँ भारतीय जनमानस पर स्वाधीनता आंदोलन और गाँधी के प्रभावों को समझा वहीं अम्बेडकर के दलित उद्धार प्रयासों को भी नज़रअन्दाज़ नहीं किया। उनकी यह विशेषता है कि वह अपने उपन्यासों तथा कहानियों में भारतीय जनमानस की मानसिक परिस्थितियों तथा उनकी समस्याओं का व्यापक चित्रण करते हैं। इसीलिए कभी-कभी ऐसा प्रतीत होता है कि प्रेमचन्द की कहानियाँ और उपन्यास आपस में एक दूसरे से अन्तर्सम्बन्धित हैं। 'पूस की रात' कहानी के हलकू और 'गोदान' उपन्यास के होरी को अलग-अलग करके देखना बेमानी होगा। इसी तरह 'घासवाली' कहानी की मुलिया और 'कर्मभूमि' की मुन्नी में सहज ही काफ़ी समानताएँ मिल जाती हैं।

'कर्मभूमि' उपन्यास के लेखनकाल के दौरान सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक स्तर पर व्यापक उथल-पुथल मची हुई थी और प्रेमचन्द की आँखें इन तथ्यों को अनदेखा नहीं कर सकती थीं। उस समय भारतीय स्वाधीनता आंदोलन ज़ोरों पर था, तथा स्वतंत्रता के साथ-साथ सामाजिक क्रांति भी तत्कालीन समय की माँग थी।

'कर्मभूमि' उनका एकमात्र ऐसा उपन्यास है जिसका कथानक सीधे स्वाधीनता आंदोलन से जुड़ा है और इस उपन्यास का नायक अमरकांत इस आंदोलन का नेता है। उन्होंने अमरकांत के चरित्र के द्वारा जहाँ राष्ट्रीय आन्दोलन और गांधीवादी विचारधारा को आकार प्रदान किया है, वहीं नैना, मुन्नी, सुखदा, रेणुका देवी, पठानिन जैसे स्त्री पात्रों के द्वारा स्त्री की क्रांतिकारी चेतना का विस्तार किया।

'कर्मभूमि' में इन्होंने स्वाधीनता आंदोलन के अतिरिक्त जाति-व्यवस्था, अंधविश्वास, किसानों का ब्रिटिशराज तथा ज़मींदारों के विरुद्ध विद्रोह, हिन्दू-मुस्लिम संबंध इत्यादि मुद्दों को स्थान दिया। इस उपन्यास में हिन्दू-मुस्लिम संबंध की व्याख्या अमरकांत, सकीना और सलीम के बीच के संबंधों के

प्रकाश में की जा सकती है तथा जाति-व्यवस्था की अमानवीयता का अंदाज़ चमारों के टोले की दयनीयता से लगाया जा सकता है।

प्रेमचन्द उन लेखकों में से थे जिन्होंने अपने लेखन के द्वारा राष्ट्रीय तथा सामाजिक क्रांति में हिस्सा लिया। इन्होंने 'गोदान' (1936), 'कर्मभूमि' (1932), 'सेवासदन' (1919), 'रंगभूमि' (1925), 'गबन' (1931) इत्यादि के द्वारा सामाजिक क्रांति की मशाल जलायी। इस परिपेक्ष्य में 'कर्मभूमि' उपन्यास का विशेष महत्त्व है, क्योंकि इसमें जनवादी क्रांतिकारी चेतना का विस्तार है। उस समय गाँव-नगर, पहाड़ों, घाटियों, सब जगह जनता जागरूक हो रही थी, जिसे ब्रिटिशराज का भयंकर दमनचक्र भी नहीं दबा सकता था। इन सभी घटनाओं की परिणति अंततः 'कर्मभूमि' के रूप में हुई है।

(क) 'कर्मभूमि' और स्वाधीनता आंदोलन

स्वाधीनता आंदोलन एक ऐसा मुद्दा है जिसे 'कर्मभूमि' से पृथक् रखकर इसकी अन्तर्वस्तु को समझना एक दुरूह कार्य होगा। भारतीय राजनीति में गाँधी के पदार्पण से स्वाधीनता हेतु प्रयासों में तीव्रता आ गई थी। असहयोग आंदोलन से प्रारम्भ होकर सविनय अवज्ञा आंदोलन तक आते-आते भारतीय जनमानस पर गाँधी का व्यापक प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। सविनय अवज्ञा आंदोलन के दौरान गाँधीजी के लगानबंदी तथा अन्य करों की अदायगी न करने के आह्वान का प्रभाव 'कर्मभूमि' पर दिखलाई पड़ता है। हालाँकि इस उपन्यास के लेखन का लक्ष्य भारतीय स्वाधीनता आंदोलन का चित्रण है, परन्तु प्रेमचन्द का उद्देश्य मात्र राजनीतिक स्वतंत्रता नहीं है बल्कि वह एक ऐसा स्वतंत्र भारत चाहते थे जहाँ पर आर्थिक और सामाजिक समानता भी विद्यमान हो ।

'कर्मभूमि' की मुख्य कथा के विषय में रामविलास शर्मा का मानना है कि प्रेमचन्द ने अछूत और लगानबंदी आंदोलनों का चित्रण किया है वहीं परमानन्द श्रीवास्तव ने सविनय आज्ञा भंग आंदोलन की पृष्ठभूमि में लिखे गए इस उपन्यास के मुख्य संघर्ष की घटना मंदिर में अछूतों के प्रवेश से संबंधित बताया है। यह ग़लत भी नहीं है क्योंकि प्रेमचन्द का स्वाधीनता आंदोलन के विषय में पृथक् दृष्टिकोण था। प्रेमचन्द का मन स्वाधीनता आंदोलन से ज़्यादा जनजीवन की बुनियादी समस्याओं में रमता था। इसलिए उपन्यास की मुख्य कथा भले ही स्वाधीनता आंदोलन हो, लेकिन इस पर किसान, मज़दूर, दलित, स्त्री सभी की समस्याओं का प्रभाव है। ''गोर्की ने यदि मज़दूर वर्ग के पात्रों को नायकों के ऊँचे सिंहासन पर बिठाया तो प्रेमचन्द ने मुख्यतः किसानों और अछूतों को।'' [1]

प्रेमचन्द के उपन्यास 'कर्मभूमि' पर गाँधीवादी विचारधारा का स्पष्ट प्रभाव दिखलाई पड़ता है। कहीं-कहीं ऐसा प्रतीत होता है कि वे पक्के गाँधीवादी हैं। कुछ स्थानों पर वे गाँधीवादी विचारधारा का अतिक्रमण करते हुए भी दिखाई पड़ते हैं। अमरकांत का सूत कातना, हिन्दू-मुस्लिम संबंध की एकता पर बल देना, अछूतों के मंदिर प्रवेश को लेकर आंदोलन करना, मादक वस्तुओं का बहिष्कार करना, लगानबंदी आन्दोलन तथा अमरकांत का ग़रीबों की बस्ती में जाकर रहना और उसकी समझौतावादी प्रवृत्ति में गाँधी के प्रभाव को समझा जा सकता है।

प्रेमचन्द स्वाधीनता आंदोलन का मात्र वैचारिक स्तर पर ही समर्थन नहीं करते थे बल्कि व्यावहारिक स्तर पर भी वे उतने ही सजग थे। फ्रैज फैनन ने कहा "अगर साम्राज्यवाद विरोधी संघर्ष के समय राष्ट्रीय चेतना को सामाजिक चेतना नहीं बनाया जाता तो भविष्य मुक्ति का नहीं, उपनिवेशवाद के बदले हुए रूप का होगा।" [2]

प्रेमचन्द ने अपनी रचनाओं के द्वारा राष्ट्र की जागृत चेतना को समाज में परिवर्तन लाने का एक उपकरण समझा, क्योंकि वे भी यह मानते थे कि मात्र सत्ता परिवर्तन स्वाधीनता का उद्देश्य नहीं है अमरकांत कहता है "मैं इसे नज़ात नहीं कहता कि एक ज़माअत के हाथों से ताक़त निकलकर दूसरी ज़माअत के हाथों में आ जाय और वह भी तलवार के ज़ोर से राज़ करे। मैं नज़ात उसे कहता हूँ कि इन्सान में इन्सानियत आ जाय और इन्सानियत की ज़ब्र, बेइन्साफ़ी और ख़ुदग़रजी से दुश्मनी है।" [3] इस प्रकार 'कर्मभूमि' में स्वाधीनता आंदोलन की कथा अकेले नहीं चलती है बल्कि समाज में घटित होने वाली अनेक प्रमुख घटनाएँ भी इस कथा का हिस्सा बनती चली जाती हैं।

(ख) 'कर्मभूमि' में किसान और किसान आंदोलन

कृषक जीवन के मार्मिक चित्रणों से प्रेमचन्द का सम्पूर्ण कथा साहित्य भरा पड़ा है। किसानों के आँसू और ज़लालत, शब्दों का आकार ग्रहण करके 'प्रेमाश्रम', तो कभी 'कर्मभूमि' तो कभी 'गोदान' का सृजन करते हैं। प्रेमचन्द ने समाज में जो कुछ देखा उसी को अपनी लेखनी के माध्यम से 'कर्मभूमि' को आकार प्रदान किया। इस उपन्यास में जो संघर्ष दिखाई देता है वह स्वयं उनके प्रत्यक्ष अनुभव से विकसित हुआ है और यही कारण है कि इस उपन्यास में उनकी यथार्थता और भी बुलंदी पर पहुँच गयी है।

प्रेमचन्द एक बहुत ही संवेदनशील लेखक थे। उनका हृदय ग़रीबों के दु:ख दर्द को देखकर द्रवित हो जाता था। पाठक जब उनकी रचनाओं को पढ़ता है तो उनके संवेदनशील स्वभाव से स्वत: ही रू-ब-रू हो जाता है। उसे उनकी रचनाओं को पढ़ने के दौरान यह महसूस ही नहीं होता है कि

वह कोई कहानी या उपन्यास पढ़ रहा है, बल्कि वह उसमें इतना डूब जाता है कि स्वयं को इन घटनाओं का प्रत्यक्षदर्शी समझने लगता है। यह जीवंतता 'कर्मभूमि' उपन्यास में भी विद्यमान है।

'कर्मभूमि' के रचनाकाल तक किसानों की समस्याएँ विकराल रूप धारण कर चुकी थीं। किसानों ने इन समस्याओं से छुटकारा पाने के लिए आंदोलनों का सहारा लिया और अपने हितों हेतु व्यापक संघर्ष किया। इन आंदोलनों की तीव्रता बहुत चंचल प्रवृत्ति की थी। कभी-कभी तो ये आंदोलन बहुत व्यापक स्वरूप ग्रहण कर लेते थे और कभी ब्रिटिशराज ज़मीदारों के साथ मिलकर व्यापक दमनचक्र चलाकर उन्हें आसानी से दबा देता था, परन्तु इस दमनचक्र से न ही किसान हताश हुए और न इनके नेता बल्कि अपने इरादों को ओर भी मज़बूत करके अपने हक़ की लड़ाई में आगे बढ़े।

'प्रेमाश्रम' उपन्यास में किसानों का कोई नेता नहीं होता है, जो आगे-आगे मशाल लेकर चले और पीछे-पीछे किसान। इस उपन्यास में जो भी विद्रोह दिखाई देता है वह स्वयं किसानों की नई पीढ़ी के द्वारा किया गया है। इसमें प्रेमचन्द ने जिन किसानों को अत्याचार सहते हुए दिखाया उन्हीं किसानों के अन्दर करवट लेती भावनाओं को भी दर्शाया है। यही भावना तीव्र होकर 'कर्मभूमि' में अपनी चरम बिन्दु पर पहुँच जाती है।

प्रेमचन्द ने 'कर्मभूमि' में भारत की ग़रीबी को रेखांकित किया है। उन्होंने गाँवों में रहने वाले ग़रीब किसानों की स्थिति के बारे में ब्यौरेवार लिखा है। वह किसान जो दिन-रात मेहनत करता है और अनाज से सारी दुनिया का पेट पालता है वही किसान इतना ग़रीब हो गया है। उसके पास अनाजों से भरी बखारें होंगी, ऐसी कल्पना करना बेमानी होगा, क्योंकि उनके पास तो दो जून की पेट भर रोटी नहीं जुहाती है। प्रेमचन्द देख रहे थे कि किसान किस तरह से शोषण के चक्र में पिसता जा रहा है। उन पर ऋण का बोझ इतना ज़्यादा लाद दिया गया था कि बेचारे क़र्ज़दार किसान की कई पीढ़ियाँ क़र्ज़ चुकाती रह जाती थीं लेकिन सूद चुकाने की अवधि समाप्त नहीं होती थी।

'कर्मभूमि' का महंत ज़मींदार भी किसानों से लगान वसूल करने में किसी तरह की कोई रियायत नहीं बरतता। कभी तो वह नज़राने के रूप में कर वसूल करता है, तो कभी दस्तूरी के रूप में। इस पर भी अगर किसान का लगान चुकता न हो तो बेगार और बेदख़ली से भी परहेज़ नहीं करता है। किसान अपनी उपज का सारा अन्न इन शोषकों को देने के बाद भी अपने बैल-बधिये तक बेचने को मज़बूर हो जाते हैं। यह देश की कैसी विडम्बना है कि जो किसान सारे संसार का पेट भरता है

वही स्वयं भूखा सो जाता है। ज़मींदार महंत अमरकांत के कहने पर किसानों को चार आने की छूट तो देता है, लेकिन बक़ाया वसूल करने में असामियों के साथ सख़्ती बरतता है। जब इलाक़े के सारे किसान भूख से बिलबिला रहे हों, ऐसे में महंत का उत्सव करना तथा तरह-तरह के स्वादिष्ट व्यंजन बनवाना मनुष्यता की सारी सीमाएँ पार कर जाना है। प्रेमचन्द ने इस शोषणकारी व्यवस्था का घिनौना चेहरा हमारे सामने उघाड़कर रख दिया है, क्योंकि उन्होंने मुखौटे के पीछे के असली चेहरे की, जिसने किसानों के मुख से केवल निवाला ही नहीं छीना बल्कि तन का कपड़ा तक उतार लिया, को पहचान लिया था। प्रेमचन्द का कहना था कि "आज भारत के किसान इतने तबाह क्यों हैं? इसलिए कि जब से अंग्रेजी शासन शुरू हुआ, यानी आज के डेढ़ सौ वर्ष पहले से विदेशी हुकूमत ने सदैव किसानों के हितों की उपेक्षा की और ज़मींदारों के हितों का समर्थन किया।" [4]

यही कारण है कि गाँव में रहने वाले बहुत से किसानों का कृषि कर्म से प्रेमचन्द ने पलायन होते दिखाया है। क्योंकि खेती से उन्हें पर्याप्त आमदनी नहीं मिल पाती थी। कुछ किसान गाँव छोड़कर शहर में जाकर छोटी-मोटी मज़दूरी कर लेते थे। 'कर्मभूमि' के पात्र पयाग और 'गोदान' के गोबर जैसे किसानों का मन खेती से टूटने लगता है और वे मज़दूरी को किसानी से श्रेयस्कर समझने लगते हैं क्योंकि तब उन पर आए दिन किसी ज़मींदार, कारकुन, साहूकार की धौंस नहीं होती है। इसीलिए पयाग अमरकांत को खेती न करने की सलाह देता है "खेती की झंझट में न पड़ना भैया। चाहे खेत में कुछ हो या न हो लगान जरूर दो। कभी ओला-पाला; कभी सूखा-बूड़ा। एक-न-एक बला सिर पर सवार रहती है। उस पर कहीं बैल मर गया या खलिहान में आग लग गयी तो सब कुछ स्वाहा।" [5]

भारत एक ऐसा कृषिप्रधान देश है, जहाँ खेती केवल जीविका का साधन ही नहीं है बल्कि किसानों के लिए सम्मानजनक जीविका भी है। कुछ किसान ऐसे भी हैं जो अपनी ज़मीन को किसी कीमत पर छोड़ने को तैयार नहीं होते क्योंकि उसमें उन्हें अपनी 'मरजाद' नज़र आती है।

'कर्मभूमि' उपन्यास का पात्र अमरकांत किसानों का नेता है। वह महंत से लगान माफ़ करवाने के लिए सात-सात दिनों तक चक्कर काटता है। लेकिन इतने दिनों में लगातार ज़मींदार महंत कभी कलेऊ पर होते हैं तो कभी आरती में। उन्हें यह सब जितना ज़रूरी लगता है उतना किसानों की फ़रियाद सुनना नहीं। सातवें दिन जब महंत से अमरकांत की भेंट होती है तो महंत चार आने लगान माफ़ करने का आश्वासन तो देता है लेकिन असामियों के साथ बक़ाया वसूल करने में सख़्ती बरतता है।

प्रेमचन्द ने सिर्फ़ राष्ट्रीय स्तर पर ही अपनी लेखनी नहीं चलायी बल्कि वे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर होने वाली हलचलों के प्रति भी बेहद सजग थे। प्रकृति का क़हर तो किसानों पर पहले से ही था, उस पर ज़मीदारों के लगान का बोझ लादे इन किसानों की कमर आर्थिक मंदी ने तोड़कर रख दी। प्रेमचन्द ने 1929-30 की आर्थिक मंदी के समय के किसानों की दयनीय स्थिति का बहुत ही मार्मिक चित्रण किया है। इसका सबसे ज़्यादा प्रभाव गाँव में रहने वाले ग़रीब किसानों पर पड़ा। प्रेमचन्द ने आर्थिक मंदी के बाद किसानों की दुर्दशा किस तरह बद से बदतर हो रही थी इसका वर्णन करते हुए लिखा - ''इस साल अनायास ही जिन्सों का भाव गिर गया। इतना गिर गया जितना चालीस साल पहले था। जब भाव तेज़ था, किसान अपनी उपज बेच-बाचकर लगान दे देता था; लेकिन जब दो और तीन की जिन्स एक में बिके तो किसान क्या करे? कहाँ से लगान दे।'' [6]

प्रेमचन्द ने यह देखा कि अभावग्रस्त किसानों पर ज़मींदारों का अत्याचार और भी ज़्यादा होता चला गया। सदियों से ज़मींदारों ने सिर्फ़ किसानों का खून ही चूसा है और उसी के चलते आज वह अपनी तोंद निकाले हुए आर्थिक मंदी की अवस्था में भी घूमा करते हैं। उनके ठाट-बाट में किसी भी तरह की कोई कमीं नहीं आई। प्रेमचन्द ने जहाँ शोषण का उल्लेख किया वहीं इस शोषण के ख़िलाफ़ उभरती आग की लपटों को भी दिशा प्रदान की। किसानों के दिलों में छिपी चिंगारी को भड़काने का काम अत्मानन्द और अमरकांत जैसे नेताओं ने किया।

प्रेमचन्द सिर्फ़ ब्रिटिशराज की पराधीनता से ही भारत को आज़ाद कराने के पक्षधर नहीं थे बल्कि वह सामंतवाद और पूँजीवाद की आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक पराधीनता से भी देश के ग़रीब किसानों और मज़दूरों को स्वतन्त्र कराना चाहते थे। वह इस उपन्यास में जनता की लड़ाई सिर्फ़ अंग्रेज़ सत्ताधारियों से ही नहीं बल्कि हिन्दुस्तानी सत्ताधारियों से भी दिखाते हैं। लगानबंदी आंदोलन में स्त्री पुरुष सभी ने साथ मिलकर उन शोषकों के ख़िलाफ़ अपने साहस का परिचय दिया। इसीलिए वृद्धा स्त्री सलोनी सलीम के मुँह पर थूक देती है तथा अपने विरोध का प्रदर्शन करती है, क्योंकि सलीम सिविल सर्वेंट है। इस समय तक किसानों में चेतना आ गई थी तथा उन्हें कठोर से कठोर दमनचक्र भी नहीं दबा सकता था। चारों तरफ़ आतंक ही आंतक था और लाशें ही लाशें। लोगों के घर तक फ़ूँक दिये जाते हैं परन्तु ये किसान अब मरने से नहीं डरते। बल्कि इस आतंक का मुक़ाबला एक होकर करते हैं। उपन्यास में किसान आंदोलन लगान माफ़ी की माँग से शुरू होकर लगानबंदी जैसी चरम क्रांतिकारी अवस्था तक पहुँचता है। इस आंदोलन को दबाने के लिए सरकार ने भरसक प्रयास किया और व्यापक स्तर पर दमनचक्र भी चलाया परन्तु किसानों को

दबाया नहीं जा सका, क्योंकि लगान का बोझ सहते सहते किसान की रीढ़ इतनी झुक गई थी कि उससे ज़्यादा झुकने का तात्पर्य था किसान और किसानी की मृत्यु।

(ग) 'कर्मभूमि' में स्त्री चेतना

प्रेमचन्द एक सजग और सतेज लेखक थे। उनके कैनवस पर कोई एक घटना और समस्या घटित नहीं होती है बल्कि उन्होंने बहुआयामी विषयों पर अपनी लेखनी चलायी। समाज में घटने वाली प्रत्येक समस्या को उन्होंने अपने कथा लेखन में स्थान दिया। वह स्त्री की सामाजिक स्थिति के प्रति पर्याप्त सजग थे तथा उसकी दयनीय हालत को देखकर तिलमिला उठते थे। उनकी यह तिलमिलाहट उनके लेखन के माध्यम से व्यक्त होती है। उन्होंने कहा, '' जरूरत इस बात की है कि स्त्रियाँ शिक्षित हों, और उसके साथ-साथ स्त्रियों को वह अधिकार मिल जाय, जो सब पुरुषों को मिले हुए हैं। जब तक सब स्त्रियाँ शिक्षित नहीं होंगी, और सब क़ानून-अधिकार उनको बराबर न मिल जायँगे, तब तक महज बराबर काम करने से ही काम नहीं चलेगा।'' [7]

उनकी रचनाओं में स्त्रियाँ मैथिलीशरण गुप्त की यशोधरा की तरह नहीं, बल्कि सही वक़्त आने पर परम्पराओं की दीवार को भी तोड़ देती हैं क्योंकि ये दीवारें किसी भी प्रकार की स्वतन्त्रता का अतिक्रमण करती हैं। 'कर्मभूमि' में स्त्रियाँ अबला के दायरे से बाहर निकलकर न केवल पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलती हैं बल्कि स्वछंद रूप से बिना पुरुष के आश्रय के भी जीवन जीने का साहस दिखाती हैं।

'कर्मभूमि' में स्त्री चेतना का एक आयाम राजनीतिक है। इस उपन्यास की लगभग सभी स्त्रियाँ देश प्रेम के रंग में रँगी हुई हैं। चाहे वह सुखदा हो या मुन्नी या फिर नैना। सभी नारियाँ स्वाधीनता के रंग में सराबोर हैं।

सुखदा उन क्रांतिकारी स्त्रियों में से एक है, जो पुरुषों को भी पीछे छोड़ देती है। प्रेमचन्द सुखदा के रूप में भारतीय स्त्रियों की सदियों की गुलामी को तोड़ते हुए दिखाते हैं कि अब हिन्दुस्तानी स्त्रियाँ घर में चूड़ियाँ पहनकर बैठने वाली नहीं हैं बल्कि देश की आज़ादी की लड़ाई में वह समान रूप से भागीदारी निभाने के लिए बाहर निकलकर लड़ने की हिम्मत भी रखती हैं। सुखदा अछूतों के मंदिर प्रवेश आंदोलन में भाग लेती है तथा अछूतों के लिए मंदिर में प्रवेश हेतु डटकर खड़ी होती है। यह ऐसा वक़्त था जब चारों और स्वतंत्रता की लहरें उमड़ रही थीं। इन लोगों ने हर तरह के प्रतिबंधों का प्रतिकार किया। यही नहीं, नैना ग़रीबों के लिए ज़मीन की लड़ाई में शहीद हो जाती है ''जिस वक़्त वह मैदान से जुलूस के साथ म्युनिसिपैलिटी के दफ़्तर की ओर चली, तो एक लाख

आदमी से कम न थे।'' [8] नैना ग़रीबों के आवास के लिए ज़मीन की माँग के आंदोलन के दौरान मारी जाती है। उसकी यह शहादत सभी में ज्वाला की तरह दहकने लगती है। इस उपन्यास की वीरांगनाएँ जेल जाने से भी नहीं डरती हैं बल्कि अपने देश तथा अपने कर्तव्यों की पूर्ति के लिए स्वयं को होम भी कर देती हैं। वहीं मुन्नी ने अपने शीलभंग करने वाले गोरों से न केवल प्रतिशोध लिया बल्कि सरकार की शोषणकारी नीतियों का प्रतिकार भी किया और इसी माँग के लिए किये गये संघर्ष के कारण ही उसे जेल भी हुई। मुन्नी के सृजन में प्रेमचन्द ने अपने दृष्टिकोण का परिचय दिया है। मुन्नी इस पुरुषसत्तात्मक समाज का प्रतिकार करती है तथा अपने पति के साथ जाने से इंकार करके अबला के सुरक्षा घेरे से बाहर निकलकर, स्वयं जीवन की कठिनाईयों का सामना करने का दृढ़निश्चय करती है।

सकीना और पठानिन के वर्णन के बिना 'कर्मभूमि' की कथा अधूरी होगी। पठानिन जो अपनी जीर्णावस्था के कारण ठीक से सीढ़ियाँ भी नहीं चढ़ पाती है, वह भी जेल जाने से नहीं हिचकती। प्रेमचन्द ने पठानिन के चित्रण से जनसामान्य में स्फूर्ति का संचार कर दिया है। अन्य स्त्री चरित्रों की तरह सकीना में भी इस अत्याचार के ख़िलाफ़ तड़प है। वह मात्र एक आदर्श प्रेमिका ही नहीं है बल्कि सकीना का देश के प्रति प्रेम को भी नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता। पर्दे में रहनेवाली यह स्त्री देश-प्रेम की ख़ातिर सलीम के पकड़े जाने पर जनता में ऊर्जा का पुनः संचार करती है और जनता को आंदोलन के लिए प्रेरित करती है।

ऐसा नहीं है कि 'कर्मभूमि' में स्त्रियाँ मात्र राजनीतिक फ़लक पर ही सजीव प्रतीत होती हैं बल्कि उनमें अपने कर्तव्यों तथा दायित्वों के प्रति भी उतनी ही सजगता है। ये नारियाँ बिना पुरुषों के सहयोग से स्वयं अपना जीवन निर्वाह करती हैं चाहे वह सुखदा हो या फिर मुन्नी, सभी ने पुरुष सत्ता का विरोध किया है, परन्तु समयानुसार इन्होंने पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलने से गुरेज नहीं किया। प्रेमचन्द की ये नारियाँ मात्र कठोर नहीं है बल्कि मृदु भी हैं। अंततः पुरुषसत्ता का प्रतिनिधि ''अमर इन देवियों को देखकर विस्मय-भरे गर्व से फूल उठा। उनके सामने वह कितना तुच्छ था, कितना नगण्य। किन शब्दों में उनकी स्तुति करे, उनकी भेंट क्या चढ़ाये।'' [9]

इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि प्रेमचन्द प्रगतिशील दृष्टिकोण वाले व्यक्ति थे। उन्होंने समाज के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी प्रगतिशीलता का परिचय दिया परन्तु प्रेमचन्द का स्त्री संबंधी दृष्टिकोण कहीं-कहीं एक बंधन में तब्दील हो जाता है। ''औरतों और मरदों के मिज़ाज में, जिस्म की बनावट में, दिल के जज़बात में फ़र्क हैं औरत एक की होकर रहने के लिए बनाई गयी है। मर्द

आज़ाद रहने के लिए बनाया जाता है।'' [10] मर्द की यह आज़ादी किससे? और स्त्री के चारों तरफ़ की यह बाड़ क्यों? यह क्यों और किससे, प्रेमचन्द को एक संदेह के घेरे में ले जाता है, और आगे चलकर 1936 में उनका यह दृष्टिकोण 'गोदान' में मालती के रूप में चित्रित होता है। प्रेमचन्द स्त्री को तितली के रूप में देखना पसन्द नहीं करते थे ''उसका बड़ा कारण यह था कि पढ़ी-लिखी लड़कियों की तरफ़ से उनके मन में कहीं यह चोर था कि लड़कियाँ पढ़-लिखकर गृहस्थी के काम की नहीं रह जातीं, तितली बनकर यहाँ-वहाँ घूमते रहने में ही उनका जी लगता है।'' [11]

शायद यही कारण था कि वह अपनी पुत्री की शिक्षा की तरफ़ ध्यान नहीं दे पाये। इसके पीछे कारण चाहे जो भी रहे हों, लेकिन यह भी सच है कि प्रेमचन्द 'प्रेमचन्द' हैं जो स्त्री की गरिमा को उसके सिर पर आँचल को रखकर निर्मित करते हैं।

(घ) हिन्दू-मुस्लिम संबंध

धर्म मानव जाति के लिए सदैव से ही एक 'सॉफ्टकॉर्नर' रहा है। धर्म के ही नाम पर न जाने कितनी लड़ाइयाँ लड़ी गयीं। यद्यपि सभी धर्मों का संदेश एक है, परन्तु मनुष्य ने अपनी सुविधानुसार इसकी भिन्न-भिन्न व्याख्याएँ की हैं। हिन्दू-मुस्लिम धर्म के बीच विभेद का कारण अब इतिहास के गर्भ में छुपा नहीं है। हिन्दू-मुस्लिम संबंधों की समस्या आज भी उतनी ही जटिल तथा विस्फोटक है, जितनी पहले थी।

हिन्दू-मुस्लिम संबंधों के बीच की खाई हमेशा से ही विद्यमान रही है। कुछ एक महानुभावों के प्रयासों से यह खाई कभी-कभी घट ज़रूर जाती है लेकिन जड़ से समाप्त कभी नहीं हुई। उन महानुभावों में एक महान आत्मा महात्मा गाँधी थे, जिन्होंने महसूस किया कि इन दोनों क़ौमों के बीच एकता स्थापित किये बिना देश की एकता संभव नहीं है। महात्मा गाँधी ने ख़िलाफ़त आंदोलन से लेकर देश के विभाजन तक हिन्दू-मुस्लिम के बीच एकता स्थापित करने का प्रयास किया। गाँधी की इस मूल्यवान परंपरा के वाहक प्रेमचन्द भी हैं। क्योंकि प्रेमचन्द के लेखन पर गाँधी के प्रभावों को हमें ढूँढने की जरूरत नहीं पड़ती। ये तो उनकी रचनाओं में सर्वत्र फैले हुए हैं। हिन्दू-मुस्लिम संबंधों की झलक इनके उपन्यासों में चाहे वह 'रंगभूमि' हो या 'कायाकल्प' या फिर 'कर्मभूमि' - सभी पर गाँधी का प्रभाव स्पष्ट है।

'कर्मभूमि' प्रेमचन्द का एक ऐसा ही उपन्यास है। जिसमें हिन्दू-मुस्लिम संबंधों के कई आयाम निर्धारित किये गये हैं। इस उपन्यास में सलीम और अमरकांत नामक पात्र के बीच की दोस्ती हिन्दू-मुस्लिम संबंधों की एक बेहतरीन नज़ीर है। वे दोनों दोस्त एक दूसरे के साथ हँसते-बोलते तथा

खाते-पीते हैं। सलीम ने अमरकांत से कहा ''तुम मुझे भी ग़ैर समझते हो। क़सम ख़ुदा की, बड़े नालायक़ आदमी हो तुम। ऐसे आदमी को गोली मार देनी चाहिए! दोस्तों से भी यह ग़ैरियत!'' [12]

उन दोनों के बीच ग़ैरियत अंशमात्र की भी नहीं है। इस दोस्ती के बीच में न तो औपचारिकता है और न ही धर्म। 'कर्मभूमि' के ये पात्र प्रेमचन्द के धर्मविषयक दर्शन का निचोड़ हैं। ''मुझे इसलाम में ऐसी कोई बात नहीं नज़र आती, जिसे मेरी आत्मा स्वीकार न करती हो। धर्म-तत्त्व सब एक हैं। हज़रत मुहम्मद को ख़ुदा का रसूल मानने में मुझे कोई आपत्ति नहीं। जिस सेवा, त्याग, दया, आत्म शुद्धि पर हिन्दू-धर्म की बुनियाद क़ायम है, उसी पर इसलाम की बुनियाद भी क़ायम है।'' [13]

हिन्दू-मुसलमान के मध्य समन्वय ही साम्प्रदायिकता विषयक प्रेमचन्द के दृष्टिकोण का प्रमुख आधार है। प्रेमचन्द के हिन्दू और मुस्लिम पात्रों के नाम से ही पता चलता है कि फलां व्यक्ति हिन्दू या मुसलमान है अन्यथा वे सभी समाज में इस क़दर घुले मिले हुए हैं कि उनका विभेदीकरण असंभव है। इन सबके रहन-सहन, खान-पान में भारी समानताएँ हैं। यद्यपि लाला समरकान्त जैसे पुरानी पीढ़ी के कुछ लोग अभी भी हिन्दू-मुस्लिम के बीच खान-पान को वर्जित मानते हैं। ''अभी दो-चार कौर ही खाये होंगे कि दरबान ने लाला समरकान्त के आने की ख़बर दी। अमरकान्त झट मेज़ पर से उठ खड़ा हुआ, कुल्ला किया, अपने प्लेट मेज़ के नीचे छिपाकर रख दिये।'' [14]

TH-19337

अमरकांत का सलीम के साथ न केवल दोस्ताना व्यवहार है बल्कि वह उसके साथ खाना भी खाता है जबकि तत्कालीन समाज में हिन्दू-मुस्लिम के बीच खान-पान वर्जित था परन्तु लाला समरकांत के डर से उसका प्लेट को मेज़ के नीचे छिपाना यह दर्शाता है कि उनकी वर्जनाओं को टूटने में समय लगेगा।

अमरकांत एक कट्टर सनातनी हिन्दू परिवार से होने के बावजूद सकीना, जो कि एक मुस्लिम लड़की है, से प्रेम करता है तथा मज़हब की दीवार लाँघकर उससे विवाह भी करने के लिए आतुर होता है। सलीम जब उसे साम्प्रदायिकता के फैलने का डर दिखाता है तो वह कहता है कि ''मैं प्रेम के सामने मज़हब की हक़ीक़त नहीं समझता'' [15] यहाँ तक कि वह अपना धर्म बदलने के लिए भी तैयार हो जाता है।

प्रेमचन्द ने 'कर्मभूमि' के अन्य पात्रों सकीना, पठानिन, लाला समरकांत, काले खाँ इत्यादि के माध्यम से हिन्दू-मुस्लिम एकता को दिखाया है। इन सभी पात्रों में एक अमन क़ायम करने की लालसा होती है, जो स्वयं प्रेमचन्द की अभिलाषा प्रतीत होती है। सकीना, मुन्नी के लिए अपने द्वारा काढ़े गये रूमाल के दो पैसे चन्दा देने के लिए आतुर होकर उस खाई को लाँघने का प्रयास करती

Jawaharlal Nehru University Library

है, जो इन दोनों ही समुदायों के बीच निर्मित हो गई है। सकीना, मुन्नी की लड़ाई को अपनी ही लड़ाई समझती है। वह किसी हिन्दू या मुसलमान के नाम पर सहायता नहीं करती है बल्कि इंसानियत के नाम पर सहायता करना चाहती है।

अमरकांत के पिता लाला समरकांत कट्टर हिन्दू हैं परन्तु प्रेमचन्द का यथार्थवाद जब आदर्शवाद में बदलता है तब लाला समरकांत को भी अपने देश का भविष्य हिन्दू-मुस्लिम एकता में ही नज़र आता है। प्रेमचन्द लाला समरकांत का हृदय परिवर्तन कराते हैं तथा वह जाति-पाँति के बन्धनों को तोड़कर सलीम के साथ भोजन करता है।

जेलर द्वारा काले खाँ की पिटाई से हुई मृत्यु ने उस रात अनजाने में ही हिन्दू-मुसलमानों के बीच एक रिश्ता बना दिया। ''प्रात:काल जब काले खाँ ने अपनी जीवन-लीला समाप्त कर दी तो ऐसा कोई क़ैदी न था; जिसकी आँखों से आँसू न निकल रहे हों ;'' [16]

'कर्मभूमि' में प्रेमचन्द ने साम्प्रदायिकता का समाहार कर दिया है। इस कथा में हिन्दू-हिन्दू नहीं है, मुसलमान-मुसलमान नहीं है। सलीम और अमरकांत के बीच केवल नाम ही संकेत है जो यह बताता है कि सलीम मुसलमान है और अमरकांत हिन्दू। नहीं तो हिन्दू-मुसलमान के बीच एकता स्थापित करने में प्रेमचन्द ने जिस जुझारूपन का परिचय दिया है, उसने इन दोनों सम्प्रदायों के बीच ऐसी एकता का निर्माण किया है कि देखते ही बनता है।

प्रेमचन्द यह बहुत अच्छी तरह समझते थे कि हिन्दू और मुसलमान के बीच द्वेष भावना एक दिन में विकसित नहीं हुई बल्कि वह इन धर्मावलम्बियों के हृदय में सैकड़ों वर्षों से सुलगती रही है। ग़लतियाँ दोनों तरफ़ से हुई, परन्तु उन्हें सुधारने का प्रयास न तो हिन्दू ने किया और न ही मुसलमान ने। समय बीतता गया और इनके बीच की दूरी बढ़ती गयी। मुंशी जी शिद्दत से यह महसूस करते थे कि इन दोनों सम्प्रदायों के बीच के संबंध ही भविष्य में भारत की दिशा निर्धारित करेंगे और ऐसा ही हुआ। 1947 का भारत विभाजन इनके बीच के ख़राब संबंधों का ही परिणाम था। 'कर्मभूमि' जब लिखा जा रहा था तब प्रेमचन्द इन बातों से अनजान नहीं थे क्योंकि ''सामयिकता मुंशी जी के कृति मन की प्रधान वृत्ति है। मुंशीजी वर्तमान में जीते हैं और वर्तमान के लिए ही लिखते हैं। इसीलिए कि उन्हें भविष्य की चिन्ता है। वर्तमान को फलाँगकर भविष्य में नहीं पहुँचा जा सकता। वर्तमान को छोड़ते ही भविष्य की स्थिति आकाशबेल की हो जाती है जो कभी नहीं फूलती। वर्तमान ही भविष्य का आधार है, उसकी खाद-मिट्टी है, और भविष्य ही वर्तमान की

सहज दिशा है, उसका गंतव्य।'' [17] जो भविष्य इन्होंने देखा था, वह था हिन्दू-मुस्लिम की एकता का, भाईचारे का। सलीम और अमरकांत की निष्कलंक दोस्ती, प्रेमचन्द की जागती आँखों का वह दिवास्वप्न था जो भारत विभाजन के कड़वे सच के रूप में फलित हुआ।

(ङ) 'कर्मभूमि' में प्रेमचन्द की दलित चेतना

'कर्मभूमि' में प्रेमचन्द की दलित चेतना का प्रभाव देखा जा सकता है। महात्मा गाँधी ही नहीं, दलित चेतना के मसीहा बी. आर. अम्बेडकर से भी उन्होंने प्रेरणा प्राप्त की है। प्रेमचन्द की गणना भारत के ऐसे रचनाकार के रूप में होती है, जिनकी रचनाएँ ग्रामीण भारत की कड़वी सच्चाईयों पर आधारित है जहाँ जाति-विभेदीकरण सबसे ज़्यादा है। प्रेमचन्द गाँधीवादी विचारधारा के एक प्रगतिशील लेखक थे, इनकी रचनाओं पर गाँधी के अछूतोद्धार कार्यक्रम का स्पष्ट प्रभाव था। दलित संबंधित जो कुछ भी लिखा गया है वह मुख्यत: दो तरह के दर्शन पर आधारित है, गाँधीवादी दर्शन तथा अम्बेडकर दर्शन। जहाँ गाँधी जाति-व्यवस्था में अटूट श्रद्धा रखते हुए दलितों की भलाई के लिए कार्य करते थे, वहीं अम्बेडकर इस पूरी व्यवस्था के ही विरोध में थे, जिसने प्राचीन काल से आज तक सिर्फ़ दलितों का अमानवीय शोषण किया है। यह एक सोचनीय पहलू है कि गाँधी का हरिजन, हरि-जन (श्रेष्ठजन) न होकर समाज का एक ऐसा तबका है जो अछूत है, मनुष्य होते हुए भी मनुष्य नहीं है बल्कि इस पूरी सामाजिक व्यवस्था का 'घूर' है जहाँ ग्रामीण समाज अपनी सारी गन्दगी इकट्ठा करता है। ग्रामीण आस्था और विश्वास के अनुसार यह एक गन्दा स्थान है परन्तु आवश्यकता पड़ने पर वही समाज वहाँ से उपले लेता है, खाद लेता है। ठीक उसी तरह दलित बस्तियाँ भी 'घूर' हैं जहाँ पूरे ग्रामीण समाज की गन्दगी रहती है और आवश्यकतानुसार समाज इनका उपयोग भी करता है। परन्तु ये समाज के अंग नहीं हैं, इनके छूने से और कभी तो उनकी वाणी और परछाई भी ग़ैरदलितों को दूषित कर देती है। ''जिस तरह मनुष्य जूता पहनता है, पर जूता शरीर का अंग नहीं है, उसी तरह समाज अछूतों का उपयोग करता है, पर वे उसके अंग नहीं हैं।''[18]

प्रेमचन्द ने दलितों की समस्याओं पर व्यापक प्रकाश डाला है बल्कि ग़ैरदलितों द्वारा दलितों के शोषण को उधेड़कर रख दिया। प्रेमचन्द के समय में जो परिवर्तन हो रहे थे प्रेमचन्द उन परिवर्तनों से भली-भाँति परिचित थे। समाज में दलितों पर नाना प्रकार के अत्याचार हो रहे थे। इन अत्याचारों के परिणामस्वरूप डा. अम्बेडकर के नेतृत्व में दलितों ने विभिन्न आंदोलनों में हिस्सा लिया, ''डॉ.

अम्बेडकर ने 1927 में महाड़ तालाब के सत्याग्रह में 'मनुस्मृति' को सार्वजनिक रूप से जलाकर बीसवीं शताब्दी में दलित विमर्श को नए तेवर दिये थे।'' [19] नि:सन्देह इस घटना का प्रभाव प्रेमचन्द की रचनाओं पर पड़ा है। इसके साथ ही अम्बेडकर के 1930 के मंदिर प्रवेश आंदोलन की घटना ने भी इन पर प्रभाव डाला है। पानी जहाँ मनुष्य की मूलभूत आवश्यकता है वहीं मन्दिर आस्था का केन्द्र बिन्दु है, दलित इन दोनों से वंचित थे।

ये समाज की कैसी बिडंबना है कि प्राचीन हिन्दूधर्मशास्त्रों ने मनुष्य को विभिन्न जातियों में इस प्रकार विभाजित किया कि, विभाजन के सबसे निचले पायदान पर खड़ा व्यक्ति स्वयं को इतना अधिक असहाय महसूस करने लगा है कि वह जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं के लिए भी दूसरों पर निर्भर है।

'कर्मभूमि' में अछूतों के मंदिर प्रवेश को लेकर एक बड़ा आंदोलन होता है जिसका नेतृत्व सुखदा और डॉ. शान्तिकुमार करते हैं। गैरदलितों की नज़र में अछूतों का मंदिर में प्रवेश पाप है क्योंकि इनके छूने भर से ही भगवान भ्रष्ट हो जायेंगे। सवर्ण की मानसिकता है कि ''भंगी, चमार जिसे देखो घुसा चला आता है, ठाकुर का मंदिर न हुआ, सराय हुई'' [20] अत: ''निकाल दो सभी को मारकर!'' [21] प्रेमचन्द एक तरफ़ न केवल दलितों पर होने वाले अत्याचारों का मार्मिक चित्रण करते हैं बल्कि उनके हक़ के लिए आवाज़ भी उठाते हैं - ''तुम्हारे ही ऊपर समाज खड़ा है, पर तुम अछूत हो। तुम मंदिरों में नहीं जा सकते। ऐसी अनीति इस अभागे देश के सिवा और कहाँ हो सकती है? क्या तुम सदैव इसी भाँति पतित और दलित बने रहना चाहते हो?'' [22] प्रेमचन्द दलित चेतना को जागृत करना चाहते थे क्योंकि वह देख रहे थे दलितों में अब चेतना का प्रसार होने लगा है और अब वह दिन दूर नहीं है जब दलित भी एक मनुष्य की तरह अपना जीवन जियेंगे तथा उनके साथ भी समानता का व्यवहार होगा। एक तरफ़ मंदिर आंदोलन में जहाँ डॉ. शान्तिकुमार के विचारों के रूप में अम्बेडकर के दर्शन की झलक दिखलाई पड़ती है। वहीं दूसरी ओर गाँव की दलित बस्ती में अमरकांत के अहिंसावादी विचारों में गाँधी के प्रभाव को खोजना भी दुष्कर नहीं है।

गाँवों में विभेद का स्तर कुछ ज़्यादा है, समाज से बहिष्कृत दलित मुर्दा मांस खाते हैं, शराब पीते हैं, तथा गंदे ढंग से जीवन यापन करते हैं परन्तु अमरकांत के प्रभाव से दलित बस्ती में थोड़ा बहुत ज्ञान का प्रचार होने लगता है। जिसके प्रभाव से इन अछूतों में से कुछ मुर्दा-मांस का सेवन बंद कर देते हैं। प्रेमचन्द जाति-व्यवस्था की निर्ममता के समर्थक नहीं थे बल्कि इन्होंने इसके समाधान हेतु अमरकांत को गाँव की दलित बस्ती में सुधारक के रूप में भेजा। जिसके परिणामस्वरूप दलितों में

चेतना का प्रसार होता है। ''कई महीने गुज़र गये। गाँव में मुरदा मांस न आया। आश्चर्य की बात तो यह थी कि दूसरे गाँवों के चमारों ने भी मुरदा मांस खाना छोड़ दिया।'' [23]

प्रेमचन्द पर अक्सर ही यह आक्षेप लगता है कि वह दलितों पर होने वाले अत्याचार का मुखर विरोध नहीं करते हैं, लेकिन यदि इनके लेखों पर गौर किया जाय तो यह तथ्य उभरकर सामने आता है कि उन पर लगाये गये आरोप निराधार और बेवज़ह हैं। उन्होंने अछूतों के मंदिर में प्रवेश के मुद्दों पर अग्रणी जातियों को व्यंग्यात्मक लहजे में कहा कि ''अछूत के पैसे तो आप बेधड़क ले लेते हैं, अछूत कोई मंदिर बनावे, आप दल-बल के साथ जायेंगे, मंदिर में देवता की स्थापना करेंगे, तर माल खायेंगे- हाँ, अछूत ने उसे छुआ न हो-दक्षिणा लेंगे, इसमें कोई पाप नहीं, न होना चाहिए, लेकिन अछूत मंदिर में नहीं जा सकता, इससे देवता अपवित्र हो जायेंगे।'' [24]

प्रेमचन्द ने हिन्दू धर्म की जड़ता पर तीखा प्रहार किया। वह छूआछूत को अमानुषिक मानते थे। उनका मानना था कि ''जिस धर्म में रहकर लोग दूसरे का छुआ पानी नहीं पी सकते, उस धर्म में मेरे लिए गुंजाइश कहाँ? मेरी समझ में नहीं आता कि हिन्दू धर्म किस पर टिका हुआ है?'' [25]

प्रेमचन्द दलितों के लिए थोड़े बहुत सुधारों के पक्षधर नहीं थे बल्कि वह मानते थे कि - ''हमारा कर्तव्य तभी पूरा होगा, जब हम देश के वर्तमान अछूतपन को जड़मूल से नष्ट कर देंगे।''[26]

'कर्मभूमि' की कथा त्रिविमीय रचना का आभास देती है। जिस प्रकार त्रिविमीय संरचना में प्रत्येक वस्तु सजीव लगती है, उसी तरह 'कर्मभूमि' की कथा भी सजीव प्रतीत होती है। यह प्रतीति, 'कर्मभूमि' की ही नहीं अपितु प्रेमचन्द के लेखन की भी विशेषता है। प्रेमचन्द की यही विशेषता इन्हें औरों से भिन्न करती है। इन्होंने 'कर्मभूमि' द्वारा एक ऐसा विशाल रंगमंच निर्मित किया, जहाँ मनुष्य पैदा होता है; जीवन-यापन करता है और अंत में मर जाता है। परन्तु जन्म से मृत्यु तक के इस क्रम में उसका सामना जीवन की कठोर सच्चाईयों से होता है। कभी यह सच्चाई उसके सामने देश की स्वाधीनता के रूप में आती है तो कभी व्यक्ति की स्वाधीनता के रूप में। इस कड़वी सच्चाई के विविध रूप हैं, जो रंगशाला रूपी कर्मभूमि में, दर्शक रूपी पाठक के सामने, एक विद्रूप सच्चाई के रूप में एक-एक कर उजागर होते हैं। यह विद्रूप सच्चाई ही, 'कर्मभूमि' को आज भी उतना ही प्रासंगिक बनाये हुए है, जितना यह अपने लेखनकाल में थी।

संदर्भ सूची -

1. *गोर्की और प्रेमचन्द : दो अमर प्रतिभाएँ,* मदनलाल 'मधु',रादुगा प्रकाशन मास्को, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.)लिमिटेड, 5 ई नई दिल्ली-110055, दूसरा संस्करण : 1987, पृ. 273
2. *अनभै साँचा* : मैनेजर पाण्डेय, पूर्वोदय प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2002, पृ. 153
3. *कर्मभूमि* : प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण : 2008, आवृत्ति : 2010, पृ. 259
4. *विविध प्रसंग-भाग-2*, प्रेमचन्द, संकलन और रूपान्तर– अमृतराय, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, 1962, पृ. 493
5. *कर्मभूमि* : प्रेमचन्द, पृ. 107
6. वही, पृ. 201
7. *प्रेमचन्द घर में* : शिवरानी देवी प्रेमचन्द, प्रथम संस्करण : 1944, रोशनाई प्रकाशन द्वारा प्रकाशित प्रथम संस्करण : 2005, पृ. 184
8. *कर्मभूमि* : प्रेमचन्द, पृ. 275
9. वही, पृ. 274
10. वही, पृ. 98
11. *प्रेमचन्दः क़लम का सिपाही* : अमृतराय, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद - 211001, प्रथम संस्करण : 1962, नवीन संस्करण, जनवरी 2005, पृ. 434
12. *कर्मभूमि* : प्रेमचन्द, पृ. 7
13. वही, पृ. 71
14. वही, पृ. 98
15. वही, पृ. 69
16. वही पृ. 250
17. *प्रेमचन्द : क़लम का सिपाही*, अमृतराय, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण : 1962, नवीन संस्करण : 2005, पृ. 322

18. *दलित विमर्श की भूमिका* : कँवल भारती, साहित्य उपक्रम, संस्करण : 2007, पृ.26
19. वही, पृ. 19
20. *कर्मभूमि* : प्रेमचन्द, पृ. 140
21. वही, पृ. 140
22. वही, पृ. 144
23. वही, पृ. 123
24. *विविध प्रसंग : प्रेमचन्द, भाग-2*, संकलन और रूपान्तर– अमृतराय, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, 1962, पृ. 448
25. *प्रेमचन्द घर में* : शिवरानी देवी प्रेमचन्द, रोशनाई प्रकाशन द्वारा प्रकाशित प्रथम संस्करण, 2005, पृ. 113
26. *विविध प्रसंग, भाग-2* – प्रेमचन्द, संकलन और रूपान्तर– अमृतराय, हंस प्रकाशन, 1962, पृ. 441

तृतीय अध्याय

पाठ आधारित परम्परागत शब्दों की सूची

(क) धार्मिक पद

(ख) सामाजिक पद

(ग) सांस्कृतिक पद

(घ) आर्थिक पद

(ङ) अन्य पद

(खान-पान, पहनावा/वेशभूषा, मनोरंजन,
माप-तौल, हिन्दी महीनों के नाम,
रहन-सहन/परिवहन के साधन, उपकरण)

पाठ आधारित परम्परागत शब्दों की सूची

सम्पूर्ण विश्व में कई सभ्यताएँ विद्यमान हैं। प्रत्येक सभ्यता का अपना एक इतिहास है। कुछ सभ्यताएँ नई हैं तो कुछ सदियों पुरानी। परन्तु हर एक सभ्यता की अपनी एक विशेष संस्कृति है, पहचान है। तीज-त्योहार, खान-पान, वेशभूषा से लेकर धर्म, सभी हमारी संस्कृति का अहम हिस्सा हैं। ''संस्कृति सामाजिक और प्राकृतिक परिवेश पर विजय पाने का एक साधन है। उसमें मनुष्य के भाव, विचार, संस्कार, संवदेनाएं सभी शामिल हैं। भाषा भी ऐसी ही संस्कृति है।''[1] संस्कृतियों का निर्माण एक दिन में नहीं होता है बल्कि यह कई वर्षो का परिणाम है। आज जो हमारा खान-पान है, रहन-सहन है, आगे चलकर वही हमारी परंपरा का हिस्सा बन जाती है।

भारतवर्ष एक विशाल भूभाग वाला देश होने के साथ-साथ एक बहुल जनसंख्या वाला देश भी है। कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक और गुजरात से लेकर उत्तर पूर्वी राज्यों तक, भारत में क़दम-क़दम पर सामाजिक-सांस्कृतिक विभिन्नताएँ विद्यमान हैं। कश्मीर में 'कहवा' पेय पदार्थ के रूप में पसंद किया जाता है तो दक्षिण भारत में 'कॉफ़ी'। 'डांडिया' गुजरात का प्रसिद्ध नृत्य है तो 'बिहू' असम का। यह तो भारत की सामाजिक-सांस्कृतिक विभिन्नता की एक बानगी भर है। यह अनेकता में एकता का देश है। यही इस देश की पहचान है, कि यहाँ भिन्न-भिन्न वेशभूषा, खान-पान वाले लोग अपनी-अपनी परम्पराओं का निर्वाह करते हुए साथ-साथ रहते हैं।

भाषा भी इसी परम्परा का एक हिस्सा है और यह परम्परा की एक जीवंत अभिव्यक्ति है। यही भाषा जब किसी रचना के द्वारा अभिव्यक्ति प्राप्त करती है तब उस भाषा के माध्यम से संबंधित सभ्यता के परम्परागत तथा परिवेशगत शब्द भी उस रचना में अभिव्यक्त होते हैं। क्योंकि भारत एक बहुभाषाभाषी देश है इसलिए क्षेत्र विशेष की सामाजिक एवं सांस्कृतिक विशेषताएँ भाषा/बोली के माध्यम से ही अभिव्यक्त होती हैं। जैसे पूर्वी उत्तर प्रदेश की 'कजरी', 'सोहर' लोकगीत या फिर बिहार का 'छठ्ठ' पर्व या 'कनिया' अन्य भाषा-भाषियों के लिए एक शब्द के अतिरिक्त कुछ भी नहीं हैं, पर इन शब्दों में क्षेत्र-विशेष की सामाजिक-सांस्कृतिक विशेषता समाहित है। भाषा और संस्कृति के अन्तर्संबंध के विषय में रामविलास शर्मा ने कहा ''भाषा संस्कृति के निर्माण में सहायक

---

[1] रामविलास शर्मा - भाषा और समाज, पृ. 406

होती है, भाषा द्वारा हम अपनी संस्कृति व्यक्त करते हैं, भाषा स्वयं भी संस्कृति का महत्त्वपूर्ण अंग है।''[1]

'कर्मभूमि' प्रेमचन्द की एक ऐसी ही रचना है जिसमें समाज में पीढ़ी दर पीढ़ी चले आ रहे शब्दों का व्यापक प्रयोग हुआ है। प्रेमचन्द एक ऐसे रचनाकार हैं जो सम्पूर्णता के परिचायक हैं। उनकी रचनाएँ परंपरा की पोषक हैं। प्रेमचन्द जब अमरकांत का चित्रण करते हैं तब वह मध्यवर्गीय चरित्र का उद्‌घाटन करते हैं। वहीं जब दलित बस्ती का वर्णन करते हैं तब वह उनकी मान्यताओं तथा रीति-रिवाजों को अपनी लेखनी के माध्यम से अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं। समग्रत: 'कर्मभूमि' में उन्होंने उत्तर भारतीय समाज की सांस्कृतिक और सामाजिक विशेषताओं का न केवल जीवंत वर्णन किया है अपितु समस्त भारत को एकता के सूत्र में पिरोया है।

'कर्मभूमि' तत्कालीन भारतीय समाज का आइना है, जिसमें न केवल उस समय के भारत का प्रतिबिम्ब दिखाई देता है बल्कि भारतीय परंपरा की सोंधी महक भी पाठक को अपनी ओर सम्मोहित करती है कि हम उन परंपराओं को क़रीब से जाने और समझे।

'कर्मभूमि' में निहित परंपरागत शब्दों को विभिन्न सूचियों यथा धार्मिक पद, सामाजिक पद, आर्थिक पद, इत्यादि में बाँटा गया है तथा इसे बाँटने का उद्‌देश्य है कि विभिन्न प्रकार के शब्दों की व्यावहारिकता का पता चल सके कि वे शब्द किस संदर्भ में प्रयुक्त हैं तथा कैसे अपनी परंपरा के द्‌योतक हैं। साथ ही हम अपनी परंपरा से रू-ब-रू हो सकें तथा महत्त्वपूर्ण यह भी है कि लक्ष्य भाषा से जुड़ी विषम संस्कृति में रचना के अनुवाद में परंपरागत पदों को अनुवादकों ने किस गहराई तक आत्मसात् किया है।

क- धार्मिक पद

(1) हिन्दू धर्म से संबंधित पद

(2) मुस्लिम धर्म से संबद्ध पद

(1) हिन्दू धर्म से संबंधित पद

(i) हिन्दू धर्म से जुड़े कर्मकाण्ड संबंधी पद

(ii) हिन्दू धर्म से जुड़े पौराणिक पात्र संबंधी पद

---

[1] रामविलास शर्मा - भाषा और समाज, पृ. 406

(iii) हिन्दू धर्म से जुड़े धार्मिक ग्रन्थ संबंधी पद

(i) **हिन्दू धर्म से जुड़े कर्मकाण्ड संबंधी पद**

मूल पाठ	**पालीवाल**	**श्रीवास्तव**
साधु-सन्त (पृ. 101)	sadhu sant (पृ. 90)	sadhu saint (पृ. 122)
साधु-सन्त (पृ. 36)	ascetic (पृ. 34)	sadhu saint (पृ. 41)
संन्यासी (पृ. 36)	sanyasi (पृ. 34)	ascetic (पृ. 42)
संन्यास (पृ. 37)	sanyas (पृ. 34)	asceticism (पृ. 42)
ठाकुरद्वारा (पृ. 114)	Thakurdwara (पृ. 99)	Thakurdwara(पृ. 139)
प्रसाद (पृ. 140)	prasad (पृ. 109)	prashad (पृ. 172)
चरणामृत (पृ. 140)	charnamrit (पृ. 109)	charanamrita (पृ. 172)
यज्ञ (पृ. 241)	yagya (पृ. 224)	yagya (पृ. 342)
शास्त्र (पृ. 141)	scriptures (पृ. 110)	shastras (पृ. 174)
गेरुए वस्त्र(पृ. 198)	अनूदित नहीं	saffron–coloured robes (पृ. 245)
कथा (पृ. 142)	katha (पृ. 111)	katha (पृ. 175)
भगवत-भजन (पृ. 133)	service of God (पृ. 101)	devotional songs(पृ. 163)
भजन (पृ. 204)	bhajan (पृ. 169)	bhajan (पृ. 253)
भजन-मंडली (पृ. 142)	Bhajan-mandali (पृ. 111)	hymn-singing troupe (पृ. 174)
यज्ञोपवीत (पृ. 201)	janeu (thread ceremony) (पृ. 164)	sacred-thread ceremony (पृ. 248)
चन्द्रोदय (पृ.167)	chandroday bhasm (पृ. 135)	Chandrodaya, the Ayurvedic medicine (पृ. 206)
पूजा-चढ़ावा (पृ. 201)	pooja and chadhava (पृ. 164)	devotional offerings (पृ. 248)
भेंट-न्योछावर (पृ. 201)	'bhent', nyochhawar (पृ. 164)	custom, gifts (पृ. 248)
स्वर्ग (पृ. 141)	heaven (पृ. 110)	heaven (पृ. 173)

मूल पाठ	पालीवाल	श्रीवास्तव
नरक (पृ. 130)	अनूदित नहीं	hell पृ.159)
पूजा (पृ. 209)	pooja (पृ. 173)	puja (पृ. 260)
भण्डार (पृ. 207)	bhandar (temple meal) (पृ. 172)	great feast (पृ. 257)
ऋषि (पृ. 12)	saint (पृ. 11)	wise man (पृ. 10)
एकादशी (पृ. 33)	Ekadashi (पृ. 31)	Ekadashi (पृ. 38)
पूजा-पाठ (पृ. 8)	worship (पृ. 6)	pray and read scriptures (पृ. 6)
तिलक (पृ. 154)	अनूदित नहीं	glory (पृ. 191)
आरती (पृ. 34)	arati (पृ. 32)	aarati (पृ. 39)
तपस्या (पृ. 241)	अनूदित नहीं	tapasya (पृ. 302)
तुलसीदल (पृ. 149)	tulasi leaves (पृ. 120)	tulsi leaves (पृ. 184)

(ii) पौराणिक पात्र संबंधी पद

लक्ष्मी (पृ. 36)	wealth (पृ. 34), भावानुवाद	goddess Laxmi (पृ. 41)
हनुमान (पृ. 53)	Hanuman (पृ. 62)	Hanuman (पृ. 75)
राम (पृ. 140)	Rama (पृ. 108)	Rama (पृ. 172)
दुर्वासा मुनि (पृ. 235)	अनूदित नहीं	Durvasa muni(पृ. 294)
दुर्योधनों (पृ. 109)	Duryodhans (पृ. 96)	Duryodhans (पृ. 133)
जरासन्धों (पृ. 109)	Jarasandhs (पृ. 96)	Jarasandhs (पृ. 133)
रावण (पृ. 140)	Ravana (पृ. 108)	Ravana (पृ. 172)
शिशु कृष्ण (पृ. 25)	child Lord Krishna (पृ. 21)	Child Krishna (पृ. 27)
परशुराम (पृ. 141)	Parashuram (पृ. 110)	Parasuram (पृ. 174)
अर्जुन (पृ. 36)	अनूदित नहीं	Arjuna (पृ. 42)
अभिमन्यु (पृ. 109)	Abhimanyu (पृ. 96)	Abhimanyu (पृ. 133)
सीता (पृ. 140)	अनूदित नहीं	Sita (पृ. 172)

मूल पाठ	पालीवाल	श्रीवास्तव
राजा शान्तनु (पृ. 134)	अनूदित नहीं	King Shantanu (पृ. 165)
राजा हरिश्चन्द्र (पृ. 263)	अनूदित नहीं	Raja Harishchandra (पृ. 329)
देवी-देवताओं (पृ. 142)	gods and goddesses (112)	gods and goddesses (पृ. 175)
दुर्गा (पृ. 40)	अनूदित नहीं	goddess Durga(पृ. 45)
बुद्ध (पृ. 71)	अनूदित नहीं	Buddha (पृ. 86)
कृष्ण (पृ. 36)	अनूदित नहीं	Lord Krishna (पृ. 42)
विश्वनाथ (पृ. 263)	Lord Vishwanath (214)	Vishwanath (पृ. 328)
ठाकुरजी (पृ. 207)	Thakurji (God) (पृ. 172)	Thakurji (पृ. 258)

(iii) हिन्दू धर्म से संबद्ध धार्मिक ग्रंथ संबंधी पद

रामायण (पृ. 39)	अनूदित नहीं	Ramayana (पृ. 45)
कथा-पुराण (पृ. 33)	Kathas – Puranas (31)	ancient myths or texts (पृ. 38)
महाभारत (पृ. 39)	अनूदित नहीं	Mahabharata (पृ. 45)
गीता (पृ. 39)	अनूदित नहीं	Bhagvad Gita(पृ. 45)
वाल्मीकीय कथा (पृ. 135)	Valmikiya Katha (पृ. 103)	Valmiki Katha (पृ. 165)
वाल्मीकीय रामायण कथा (पृ. 175)	अनूदित नहीं	Valmiki's Ramayana Katha (पृ. 217)

(2) मुस्लिम धर्म सम्प्रदाय से संबद्ध पद

(i) मुस्लिम धर्म से जुड़े पद

(ii) मुस्लिम धर्म में धार्मिक सम्बोधन संबंधी पद

(i) **मुस्लिम धर्म से जुड़े पद**

कलमा (पृ. 71)	भावानुवाद	भावानुवाद
सिजदे (पृ. 248)	Sizda (पृ. 204)	praying (पृ. 310)

मूल पाठ	पालीवाल	श्रीवास्तव
नमाज़ (पृ. 247)	Namaz (पृ .203)	Prayer (पृ. 310)
रोज़ा-नमाज़ (पृ. 170)	अनूदित नहीं	pray & fast (पृ. 210)

(ii) मुस्लिम धर्म में धार्मिक संबोधन संबंधी पद

अल्लाह (पृ. 27)	Allah (23)	Gods/Allah (पृ. 30)
खुदा (पृ. 27)	Khuda (23)	God/Allah (पृ. 30)
अल्लाहो अकबर (पृ. 248)	Allah ho Akbar (204)	Allah-ho-Akbar (पृ. 310)

प्रस्तुत लघु शोध-प्रबंध में उपरोक्त धार्मिक पदों का वर्गीकरण कई श्रेणियों में किया गया है। कुछ पद हिन्दू धर्म से संबंधित हैं तो कुछ मुस्लिम धर्म से। भारत में हिन्दू-मुस्लिम महज़ एक शब्द नहीं हैं बल्कि ये दो अलग-अलग संस्कृतियों को समाहित किये हुए हैं। यद्यपि भारतवर्ष में हिन्दू-मुस्लिम हज़ारों वर्षों से साथ-साथ रह रहे हैं। तमाम समानताओं के बावजूद, इनमें काफ़ी विभिन्नताएँ भी मौजूद हैं। इन दोनों सम्प्रदायों या फिर अन्य सम्प्रदायों की धार्मिक मान्यताएँ अलग-अलग होती हैं। जब अनुवादक स्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा में अनुवाद करता है, तब बहुत हद तक यह संभव है कि अनुवादक इन विभिन्नताओं को न समझ सके। यदि समझ भी जाए तो सीमित शब्द सम्पदा के कारण वह इन अन्तरों को न स्पष्ट कर सके। जैसे मूल पाठ में दिये गए 'सिजदा', 'नमाज', 'पूजा' का अनुवाद श्रीवास्तव ने *praying, pray, puja* किया है। यहाँ इन्होंने सामान्यीकरण की प्रवृत्ति को अपनाया है और 'सिजदा', 'नमाज' का अनुवाद लक्ष्य भाषा के शब्दों में अन्तरण के रूप में किया है। यद्यपि अंग्रेज़ी भाषा के शब्दों में हमें बहुत भिन्नता नहीं दिखाई देगी परन्तु 'सिजदा', 'नमाज', पूजा के एक प्रकार होकर भी भिन्न हैं । क्योंकि 'सिजदा' मुस्लिम संस्कृति से संबंध रखता है, जिसका तात्पर्य है ईश्वर के सामने सिर झुकाना तथा 'नमाज' का मतलब है दिन में पाँच वक़्त खुदा की इबादत करना। 'पूजा' हिन्दू धर्म से संबंधित है, जिससे साधारणतः ईश-उपासना का बोध होता है। अब यदि रीतारानी पालीवाल के अनुवाद का अवलोकन करें तो उन्होंने 'सिजदा', 'नमाज', 'पूजा' के लिए *Sizda, Namaz, pooja* शब्दों का प्रयोग किया है। रीतारानी पालीवाल ने जहाँ मूल पाठ के प्रवाह को बनाये रखने के लिए मूल-पाठ के कुछ

शब्दों का लिप्यंतरण मात्र कर दिया है वहीं ललित श्रीवास्तव ने 'पूजा' शब्द को *puja* द्वारा यथातथ्य रूप में प्रतिस्थापित करके अपने शब्द संग्रह में *act of worship* के रूप में समझाया है।

'कर्मभूमि' में कई पौराणिक पात्रों का भी उल्लेख है जैसे- 'हनुमान', 'दुर्योधन' 'जरासन्ध', 'परशुराम' इत्यादि। इन पौराणिक पात्रों का अनुवाद दोनों अनुवादकों ने क्रमशः *Hanuman, duryodhan, Parashuram, Rama* किया है।

रवीन्द्र गर्गेश के अनुसार "हर भाषा के शब्दों का अपना-अपना भाव जगत होता है। शब्दों के अर्थ सामाजिकता और संस्कृति से जुड़े होते हैं। दो भाषाएँ जितनी भिन्न होंगी अनुवाद प्रक्रिया उतनी ही जटिल होगी।"[1]

हिन्दी और अंग्रेज़ी दो भिन्न-भिन्न परिवेश की भाषाएँ हैं। दोनों भाषाओं के शब्दों का अपना-अपना भाव जगत है। यही कारण है कि जब हम हिन्दी से अंग्रेज़ी में अनुवाद करते हैं तब हमें कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है। पौराणिक पात्रों के अनुवाद में भी कुछ इसी प्रकार की समस्या उत्पन्न होती है। पालीवाल जी तथा श्रीवास्तव जी ने मूल पाठ के भाव को बनाये रखने के लिए इन पौराणिक पात्रों के नामों को जस का तस रख दिया है। क्योंकि इन पात्रों के नामों के समतुल्य अन्य किसी नाम का उल्लेख नहीं किया जा सकता है। परन्तु एक अन्य समस्या यह भी है कि पौराणिक पात्र मात्र एक नाम नहीं होते हैं बल्कि इनका एक अपना महत्त्व है । जैसे 'राम' शब्द के आते ही भारतवासियों के जेहन में 'राम' के आदर्श, 'रावण' पर विजय, इत्यादि उभर आते हैं। लेकिन यही जब अनुवाद होता है तो अनुवादक इन पात्रों के नाम के साथ ज़्यादा छेड़छाड़ नहीं कर सकता है। अतः भिन्न सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश वाले व्यक्ति इन पौराणिक शब्दों से परिचित न होने के कारण इसे महज़ एक नाम ही समझते हैं । ऐसे शब्दों के लिए अनुवादक को लिप्यंतरण करके पाद-टिप्पणी दे देना एक अच्छा प्रयास होगा।

ठीक ऐसे ही कुछ अन्य शब्द जैसे 'एकादशी' 'रोजा' 'यज्ञोपवीत' का अनुवाद श्रीवास्तव ने *Ekadashi, fast, sacred-thread ceremony* किया है, तथा *Ekadashi* शब्द का अपने शब्द संग्रह में *Eleventh day of lunar fortnight* लिखकर पाठकों को समझाने का एक सफल प्रयास किया है वहीं पालीवाल ने केवल *Ekadashi* शब्द लिखकर अपने कर्तव्य से इतिश्री कर लिया तथा कोई पाद-टिप्पणी नहीं दिया है। इसी प्रकार 'रोजा' शब्द का श्रीवास्तव जी ने जहाँ लक्ष्यभाषा

---

[1] Translation and Interpreting : Edited by Ravinder Gargesh, Krishna Kumar Goswami, पृ. 128

में अनुवाद किया है वहीं पालीवाल ने इस शब्द को छोड़ दिया है। हालाँकि श्रीवास्तव जी ने *fast* लिखकर पाठकों के लिए सुविधा तो प्रदान कर दी है लेकिन यह शब्द 'रोजा' के महत्त्व को बयां करने में सक्षम नहीं है, क्योंकि रोजा एक कठिन संयम वाला व्रत है जो मुस्लिम धर्म से जुड़ा है। 'यज्ञोपवीत' शब्द का अनुवाद, पालीवाल ने *janeu (thread ceremony)* तथा श्रीवास्तव ने *sacred-thread ceremony* किया है। पालीवाल ने जहाँ janeu लिखकर कोष्ठक में व्याख्यापरक शैली में समझाया है वहीं श्रीवास्तव ने भी व्याख्यात्मक अनुवाद शैली को अपनाया है।

ख- सामाजिक पद

(i) जातिसूचक पद

(ii) कर्मसूचक पद

(iii) संबंधसूचक पद

(iv) अन्य सामाजिक पद

(i) जातिसूचक पद

मूलपाठ	**पालीवाल**	**श्रीवास्तव**
पंडित (पृ. 8)	Pandit (पृ. 6)	Pandit (पृ. 6)
कुंजड़ा (पृ. 182)	अनूदित नहीं	vegetable seller (पृ. 226)
मल्लाहों (पृ. 20)	अनूदित नहीं	boatmen (पृ. 21)
धोबी (पृ. 79)	washerman/dhobi (पृ. 150)	dhobhis(पृ. 225)
रैदास (पृ. 100)	raidas (पृ. 89)	Chamaar (पृ. 121)
चमार (पृ. 101)	chamar (पृ. 90)	Chamaar (पृ. 122)
ब्राह्मण (पृ. 101)	Brahmin (पृ. 90)	Brahman (पृ. 122)
सोनारों (पृ. 207)	अनूदित नहीं	goldsmiths (पृ. 258)
मेहतर (पृ. 186)	Sweeper, mehatar (पृ. 156)	sweeper (पृ. 231)
नाई-कहारों (पृ. 181)	barbers-kahars (पृ. 150)	Barbers and Kahaars (पृ. 225)
ज़मादार (पृ. 181)	Jamadar (पृ. 150)	jamadaar, sweeper (पृ.228, 226)

मूलपाठ	पालीवाल	श्रीवास्तव
छत्तरी (पृ. 108)	अनूदित नहीं	Kshatriyas (पृ. 131)
क्षत्रियों (पृ. 201)	Kshatriyas (पृ. 165)	Kshatriyas (पृ. 248)
डोम (पृ. 148)	dom (पृ. 118)	Dom (पृ. 183)
अहीरों (पृ. 253)	Ahir (पृ. 208)	milkmen (पृ. 317)
भंगी (पृ. 140)	अनूदित नहीं	Sweeper (पृ. 172)
वैश्य (पृ. 208)	अनूदित नहीं	Vaishyas (पृ. 259, 179)
राजपूत (पृ. 125)	अनूदित नहीं	Rajput (पृ. 152)
खटिक (पृ. 183)	Khatik (पृ. 153)	Khatik (पृ. 228)
ठाकुर (पृ. 119)	अनूदित नहीं	Thakur (पृ. 146)

समस्त विश्व में वर्ग विभेदीकरण किसी न किसी रूप में विद्यमान है। इसका सर्वोत्तम उदाहरण श्रमिक और पूँजीपति वर्ग है, परन्तु जातीय विभेदीकरण सामाजिक व्यवस्था का वह रूप है जो मनुष्य और मनुष्य के बीच मनुष्यत्व का बर्ताव करने से रोकती है। वैदिक साहित्य में चार वर्णों (ब्रह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र) का ही उल्लेख मिलता है परन्तु कालान्तर में धीरे-धीरे सैकड़ों जातियों का विकास हो गया। यद्यपि जाति-व्यवस्था से भारतीय समाज अनभिज्ञ नहीं है, परन्तु विषम सांस्कृतिक समाज को इस जाति-व्यवस्था की जटिलता को समझना मुश्किल होगा।

पालीवाल तथा श्रीवास्तव ने जातिसूचक पदों, जैसे कि 'पंडित', 'चमार', 'ब्राह्मण', 'क्षत्रिय', 'डोम' का अनुवाद निम्नलिखित रूप में किया है।

पंडित	Pandit	Pandit
चमार	chamar	Chamaar
ब्राह्मण	Brahmin	Brahman
क्षत्रिय	Kshatriyas	Kshatriyas
डोम	dom	Dom

उपरोक्त शब्दों के विश्लेषण से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि अनुवादकों ने इन शब्दों का यथातथ्य रूप में प्रतिस्थापन कर दिया है। श्रीवास्तव ने अधिकांश जातिसूचक शब्दों के बारे

में शब्दसंग्रह में समझाया है, जबकि पालीवाल ने नहीं। यहाँ यह तथ्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि जिन शब्दों का यथातथ्य रूप में प्रतिस्थापन किया गया है उनकी अंग्रेज़ी वर्तनी में हमें अन्तर मिलता है जैसे -

चमार	Chamar	Chamaar
कहार	Kahar	Kahaar
ब्राह्मण	Brahmin	Brahman

जातिसूचक पदों के अनुवाद में अनुवादक को अत्यन्त कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। यदि इन पदों का केवल लिप्यंतरण कर दिया जाय तो विषम सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश वाला व्यक्ति उन्हें नहीं समझ पायेगा। क्योंकि उनके समाज में जाति-व्यवस्था की जटिलता नहीं पायी जाती है और यदि इनके समतुल्य लक्ष्य भाषा में अनुवाद कर दिया जाय तब अनूदित कृति में प्रवाह के प्रभावित होने की संभावना रहती है।

(ii) कर्मसूचक पद

मूलपाठ	**पालीवाल**	**श्रीवास्तव**
ज़मींदार (पृ. 106)	Zamindar (पृ. 45)	landlord (पृ. 129)
महाजन (पृ. 8)	moneylender (पृ. 5)	moneylender (पृ. 5)
मुनीम (पृ. 8)	Munim (पृ. 5)	Munim/clerk (पृ. 5)
स्वामी (पृ. 206)	Swami (पृ. 171)	Swami (पृ. 255)
महन्त (पृ. 207)	Mahant (पृ. 171)	Mahant (पृ. 257)
ओझे (पृ. 102)	Ojha (पृ. 92)	occultist (पृ. 123)
पण्डों (पृ. 144)	pandas (पृ. 114)	acolytes (पृ. 178)
तम्बोलिन (पृ. 170)	tambolin (paan shop) (पृ. 139)	tambolin (पृ. 211)
पानवाला (पृ. 41)	अनूदित नहीं	paanwalah (पृ. 48)
ताँगेवाला (पृ. 41)	अनूदित नहीं	tongawalah (पृ. 48)
सेठ-साहूकार (पृ. 37)	Seth-sahukaras (पृ. 35)	seths and moneylenders (पृ. 42)
कसाई (पृ. 252)	अनूदित नहीं	butchers (पृ. 316)

मूलपाठ	पालीवाल	श्रीवास्तव
राज (पृ. 165)	अनूदित नहीं	bricklayers, plasterers (पृ. 205)
बेलदार (पृ. 165)	अनूदित नहीं	diggers (पृ. 205)
बढ़ई (पृ. 165)	अनूदित नहीं	carpenters (पृ. 205)
मौलवी (पृ. 71)	Maulavi (पृ. 60)	Maulvi (पृ. 85)
लोहार (पृ. 165)	अनूदित नहीं	ironsmiths (पृ. 205)
कविराज (पृ. 176)	Kaviraj (पृ. 146)	Kaviraj(पृ. 218)
थानेदार (पृ. 216)	Thanedar (पृ. 179)	Police – inspector (पृ. 269)
ग्वालों (पृ. 226)	अनूदित नहीं	Milkmen (पृ. 282)
बनियों (पृ. 48)	अनूदित नहीं	baniya (पृ. 57)
घोसी (पृ. 182)	Ghosi (पृ. 151)	Milkman (पृ. 226)
पण्डे-पुजारियों (पृ. 208)	अनूदित नहीं	priests (पृ. 259)
ब्रह्मचारी (पृ. 140)	Brahmachari (पृ. 108)	Brahmachari (पृ. 172)

उपरोक्त तालिका से यह स्पष्ट है कि अनुवादकों ने कुछ शब्दों का पाठधर्मी अनुवाद किया है तो कुछ का प्रभावधर्मी। अब अगर 'महन्त' शब्द को लें तो दोनों ही अनुवादकों ने मौलिकता को बनाये रखने के लिए *Mahant* शब्द को जस का तस रख दिया है और इसके लिए कोई पाद-टिप्पणी नहीं दिया है। हालाँकि यह भारतवासियों को समझने के लिए तो सुविधाजनक है, लेकिन विदेशी भाषा-भाषियों के लिए एक शब्द के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं । वह यह समझने में असमर्थ रहेगा कि महन्त एक धर्माचार्य होता है। इसके लिए बेहतर यह होता कि अनुवादकों ने *Mahant* शब्द को लिखकर कोई पाद-टिप्पणी दे दी होती।

यदि कुछ अन्य शब्दों पर विचार किया जाय जैसे कि 'ओझा' तथा 'पण्डा', तो 'ओझा' एक झाड़ फूँक करने वाला व्यक्ति होता है तथा 'पण्डा' धार्मिक कर्मकाण्डों से सम्बद्ध होता है। श्रीवास्तव जी ने प्रभावधर्मी अनुवाद की शैली का प्रयोग करते हुए 'ओझा' के लिए *occultist* शब्द का प्रयोग किया है जबकि पालीवाल जी ने पाठधर्मी अनुवाद की शैली का प्रयोग करते हुए

ojha शब्द का ही प्रयोग किया है और कोष्ठक में *one who does treatment through magical charms* लिखकर समझाने का एक सफल प्रयास किया है, साथ ही साथ उन्होंने 'पण्डा' शब्द को जस का तस रख दिया है तथा कोई पाद-टिप्पणी नहीं दिया है। इसी तरह से श्रीवास्तव ने 'जमींदार' तथा 'मुनीम' के लिए उपरोक्त शैली से भिन्न प्रभावधर्मी शैली का प्रयोग करते हुए क्रमशः निम्न प्रकार से अनुवाद किया है।

जमींदार	landlord
मुनीम	clerk

जबकि पालीवाल जी ने श्रीवास्तव जी से भिन्न शैली का प्रयोग करते हुए 'मुनीम' और 'जमींदार' के लिए निम्न प्रकार का पाठधर्मी अनुवाद किया है।

जमींदार	Zamindar
मुनीम	munim

यहाँ पर कहना आवश्यक हो जाता है कि पालीवाल ने यदि कुछ शब्दों को यथावत् रख दिया है तो वह इसलिए, जिससे कि भारत की सांस्कृतिक महक बनी रहे, वहीं श्रीवास्तव ने कुछ शब्दों का अनुवाद लक्ष्यभाषा के शब्दों से अन्तरण के रूप में किया है।

(iii) संबंधसूचक पद

मूल पाठ	**पालीवाल**	**श्रीवास्तव**
अम्मांजान (पृ. 92)	अनूदित नहीं	Amma-jaan (पृ. 112)
ख़सम (पृ. 175)	husband (पृ. 144)	husband (पृ. 217)
देवर (पृ. 234)	अनूदित नहीं	devar (पृ. 293)
बहू (पृ. 26)	Bahu (पृ. 29) daughter- in -law (पृ. 93)	daughter -in- law (पृ. 124), Bahu(पृ. 22)
भाभी (पृ. 35)	Bhabhi (पृ. 33)	Bhabhi (पृ. 40)
देवरानियाँ (पृ. 102)	अनूदित नहीं	wives of the younger brother (पृ. 124)
काकी (पृ. 104)	kaki (पृ. 94)	Auntie (पृ. 125)
भावज (पृ. 35)	sister-in-law (पृ. 33)	भावानुवाद
भाई (पृ. 35)	brother (पृ. 33)	brother (पृ. 41)

मूल पाठ	पालीवाल	श्रीवास्तव
बहन (पृ. 35)	sister (पृ. 33)	sister (पृ. 41)
दादी (पृ. 115)	grandmother (पृ. 99)	grandmother (पृ. 140)
मामा (पृ. 115)	mother (पृ. 99)	ayah (पृ. 140)
बुआ (पृ. 226)	aunt (पृ. 187)	aunt (पृ. 282)
दादा (पृ. 226)	grandfather (पृ. 187)	grandfather (पृ. 282)
पूत (पृ. 231)	अनूदित नहीं	son (पृ. 288)
अम्माँ (पृ. 31)	Amma (पृ. 28)	Amma (पृ. 33)
ससुर (पृ. 90)	father-in-law (पृ. 80)	father-in-law (पृ. 109)
समधिन (पृ. 263)	samadhin (पृ. 214)	mother-in-law of son (पृ. 328)
सास (पृ. 53)	mother-in-law (पृ. 43)	mother-in law (पृ. 64)
शौहर (पृ. 60)	अनूदित नहीं	husband (पृ. 72)
पति (पृ. 14)	husband (पृ. 14)	husband (पृ. 13)
अब्बाजान (पृ. 114)	father (पृ. 99)	Abba-jaan (पृ. 140)

(iv) अन्य सामाजिक पद

कुनबा (पृ. 30)	whole family (पृ. 28)	whole family (पृ. 34)
सेवाश्रम (पृ. 76)	sevashram (पृ. 64)	Sevashram (पृ. 92)
अछूत (पृ. 102)	untouchable (पृ. 93)	untouchable (पृ. 124)
कफ़न (पृ. 169)	coffin (पृ. 138)	shroud (पृ. 209)
चौपाल (पृ. 106)	chaupal (पृ. 95)	chaupal (पृ. 203)
आश्रम (पृ. 179)	Ashram (पृ. 133)	Ashram (पृ. 203)
दावत (पृ. 60)	feast (पृ. 50)	festivities (पृ. 72)
घाट (पृ. 79)	अनूदित नहीं	ghat (पृ. 96)
प्रीति-भोज (पृ. 52)	अनूदित नहीं	festive dinner (पृ. 62)

मूल पाठ	पालीवाल	श्रीवास्तव
भोज(पृ. 60)	अनूदित नहीं	feast(पृ.72)
ग- सांस्कृतिक पद		
गंगा-स्नान (पृ. 33)	dip in Ganga (पृ. 31)	dip in the Ganges (पृ. 38)
हरिद्वार (पृ. 102)	Haridwar (पृ. 92)	Haridwar (पृ. 123)
बारात (पृ. 10, 69)	baraat (पृ. 9)	wedding party (पृ. 8)
	marriage (पृ. 59)	marriage (पृ. 84)
निकाह (पृ. 68)	Nikah (पृ. 58)	wedding (पृ. 82)
गंगाजल (पृ. 140)	Gangajal (पृ. 109)	Gangajal (पृ. 172)
माघ में काशी (पृ. 17)	Kashi in the month of Magh (पृ. 16)	Benaras in March (पृ. 17)
प्रयाग का स्नान (पृ. 17)	dip in Prayag (पृ. 16)	Prayag for a bath in the Ganges (पृ. 17)
गंगातट (पृ. 17)	bank of the Ganga (पृ. 16)	bank of the Ganges (पृ. 17)
सिन्दूर (पृ. 173)	sindur (पृ. 141)	sindoor(पृ.232)/vermilion (पृ. 215)
पाहुना (पृ. 102)	guest (पृ. 93)	guest (पृ. 122)
ब्याह-गौना (पृ. 29)	married (पृ. 25)	marry (पृ. 32)
नगड़िया (पृ. 116)	अनूदित नहीं	small drums (पृ. 142)
शिवरात्रि (पृ. 35)	अनूदित नहीं	Shivratri (पृ. 40)
सगाई (पृ. 116)	अनूदित नहीं	engaged (पृ. 142)
होली (पृ. 154)	Holi (पृ. 124)	Holi (पृ. 190)
घ- आर्थिक पद		
कारकुन (पृ. 209)	karkun (agent employee) (पृ. 173)	Agent of Records (पृ. 260)

मूल पाठ	पालीवाल	श्रीवास्तव
बेगार (पृ. 201)	begar (non-remunerative work) (पृ. 164)	free labour (पृ. 248)
लगान (पृ. 201)	lagaan (land revenue) (पृ. 164)	land tax (पृ. 248)
दस्तूरियाँ (पृ. 201)	customary offerings (पृ. 164)	customary services (पृ. 249)
असामी (पृ. 209)	tenants (पृ. 173)	tenants (पृ. 260)
क़र्ज़ (पृ. 209)	loan (पृ. 165)	debt, borrow money (पृ. 1, 249)
मुख़्तार (पृ. 201)	mukhtars (पृ. 164)	small court's legal practitioner (पृ. 248)
ङ- अन्य पद		
(i) खान-पान		
पान (पृ. 62)	paan (पृ. 52)	paan (पृ. 74)
हुक्का (पृ. 84)	hukka (पृ. 74)	hukkah (पृ. 101)
निगाली (पृ. 134)	smoke (पृ. 101)	hukkah (पृ. 164)
तम्बाकू (पृ. 142)	tobacco (पृ. 111)	tobacco (पृ. 175)
हलवा (पृ. 226)	halwa (पृ. 186)	halwa (पृ. 182)
बाजरे की रोटियाँ (पृ. 75)	bajra roties (पृ. 63)	millet bread (पृ. 90)
मसूरदाल (पृ. 75)	masur dal (पृ. 63)	lentil daal (पृ. 90)
परवलों (पृ. 207)	अनूदित नहीं	parwals (पृ. 258)
पूड़ियाँ (पृ.207)	अनूदित नहीं	puris (पृ.257)
गुड़ (पृ. 8)	jaggery (पृ. 5)	brown sugar/gur (पृ.5,पृ.93)
कचौड़ियाँ (पृ. 207)	अनूदित नहीं	kachauri (257)
खीर (पृ. 239)	अनूदित नहीं	khir (पृ. 299)
पकौड़ियाँ (पृ. 35)	pakories (पृ. 33)	pakoris (पृ. 40)
गुलगुले (पृ. 77)	अनूदित नहीं	sweets (पृ. 93)

मूल पाठ	पालीवाल	श्रीवास्तव
भंग (पृ. 145)	अनूदित नहीं	bhang (पृ. 179)
सिगार (पृ. 172)	cigar (पृ. 141)	cigar (पृ. 214)
गड़गड़ा (पृ. 134)	hukka (पृ. 101)	hukkah (पृ. 164)
अचार (पृ. 209)	अनूदित नहीं	pickles (पृ. 260)
चटनी (पृ. 209)	अनूदित नहीं	chutney (पृ. 260)
मुरब्बे (पृ. 209)	अनूदित नहीं	अनूदित नहीं
मलाई (पृ. 209)	अनूदित नहीं	cream (पृ. 260)
दही (पृ. 209)	अनूदित नहीं	curd (पृ. 260)
रोटियाँ (पृ. 26)	roti (पृ. 23)	bread (पृ. 29)
सत्तू (पृ. 170)	अनूदित नहीं	gruel (पृ. 211)
पान का बीड़ा (पृ. 25)	अनूदित नहीं	bira of paan (पृ. 27)
ज़रदा (पृ. 170)	अनूदित नहीं	saffron rice (पृ. 211)
पुलाव (पृ. 170)	अनूदित नहीं	अनूदित नहीं
बताशों (पृ. 57)	अनूदित नहीं	batashas (पृ. 68)
मोटे-मोटे लिट्ट (पृ. 123)	अनूदित नहीं	thick cakes of bread (पृ.152)
शर्बत (पृ. 221)	अनूदित नहीं	sharbat (पृ. 275)
चावल(पृ. 57)	अनूदित नहीं	rice (पृ. 68)
घुइयाँ (पृ. 133)	अनूदित नहीं	ghujian (पृ. 163)
अरहर (पृ. 21)	अनूदित नहीं	legume, Citisus cajan (पृ. 22)

(ii) पहनावा/वेशभूषा

खद्दर की साड़ियाँ (87)	khaddar items (पृ. 77)	khaddar saris (पृ. 105)
सोने के कड़े (पृ. 27)	gold karas (पृ. 23)	gold bracelets (पृ. 29)
रेशमी कुरता (पृ. 61)	silk kurta (पृ. 52)	silk kurta (पृ. 74)
ओढ़नी (पृ. 30)	orahani (पृ. 28)	scarf/veil (पृ. 33,79)

मूल पाठ	पालीवाल	श्रीवास्तव
चूड़ियाँ (पृ. 187)	अनूदित नहीं	bangles (पृ. 232)
जम्फर (पृ. 87)	अनूदित नहीं	jumpers (पृ. 105)
आँचल (पृ. 61)	anchal (पृ. 51)	border of her sari (पृ. 74)
मुकुट (पृ. 109)	अनूदित नहीं	crown (पृ. 133)
साड़ी (पृ. 234)	sari (पृ. 195)	sari (पृ. 293)
चमरौधे जूते (पृ. 100)	chamaraudha shoes (पृ. 89)	cheap shoes (पृ. 121)
धोती (पृ. 100)	dhoti (पृ. 89)	dhoti (पृ. 121)
पजामा-कुरता (पृ. 141)	pajama-kurta(पृ. 28)	pajama and kurta (पृ. 34)
सोने की कंठी (पृ. 49)	अनूदित नहीं	gold necklace (पृ. 59)
सोने की मुहर (पृ. 116)	अनूदित नहीं	gold coin (पृ. 142)
लहँगा (पृ. 142)	lehenga (पृ. 111)	lehangas (पृ. 175)
पैजनिया (पृ. 116)	अनूदित नहीं	tiny bells (पृ. 142)
चिकन की साड़ी (पृ. 68)	chikan sari (पृ. 58)	muslin sari (पृ. 82)
सोने की ज़ंजीर (पृ. 40)	gold chain (पृ. 36)	gold chain (पृ. 46)
(iii) मनोरंजन संबंधी पद		
मदारी का तमाशा (पृ. 78)	Madari Ka Tamasha (पृ. 66)	juggler's pageant (पृ. 94)
ताश (पृ. 20)	Cards (पृ. 19)	cards (पृ. 20)
ग़ज़ल (पृ. 63)	ghazal (पृ. 54)	ghazal (पृ. 75)
झूला (पृ. 201)	jhoola (पृ. 164)	swings (पृ. 248)
चौसर (पृ. 20)	chausar (पृ. 19)	game of chausar (पृ. 20)
कबड्डी (पृ. 264)	अनूदित नहीं	kabaddi (पृ. 330)
नाच-मुजरे	अनूदित नहीं	dancing and music (पृ. 62)

मूल पाठ	पालीवाल	श्रीवास्तव
(iv) माप-तौल		
तोले (पृ. 26)	tolas (पृ. 23)	hundred and twenty grams (पृ. 298)
आने (पृ. 40)	annas (पृ. 37)	annas (पृ. 46)
कौड़ी (पृ. 114)	paisa (पृ. 99)	kauri (पृ. 139)
पाव (पृ. 101)	quarter ser (पृ. 90)	paav (eight ounces) (पृ. 122)
आध सेर (पृ. 202)	अनूदित नहीं	pound (पृ. 250)
सेर (पृ. 201)	ser (पृ. 165)	kilo (पृ. 249)
मन (पृ. 201)	man (forty sers (पृ. 165)	maund – about forty kilos (पृ. 249)
बीघे (पृ. 108)	अनूदित नहीं	bighas (पृ. 131)
(v) हिन्दी महीनों के नाम		
माघ (पृ. 17, 72)	Magh (पृ. 16)	March (पृ. 17) Magh (पृ. 86)
सावन (पृ. 176)	Sawan (पृ. 146)	Saavan (पृ. 220)
असाढ़ (पृ. 215)	अनूदित नहीं	Asarh (पृ. 267)
जेठ (पृ. 211)	अनूदित नहीं	July (पृ. 262)
कार्तिक (पृ. 234)	अनूदित नहीं	Kartik (पृ. 293)
फागुन (पृ. 119)	अनूदित नहीं	Phagun (पृ. 146)
पूस (पृ. 151)	अनूदित नहीं	Poos (पृ. 188)

हिन्दी महीनों के नाम और अंग्रेज़ी महीनों के नाम में महत्त्वपूर्ण अन्तर यह है कि हिन्दी महीने अंग्रेज़ी महीने के मध्य से आरम्भ होते हैं अत: इस बारीक-सी बात को न समझ सकने के कारण श्रीवास्तव ने मूल पाठ (पृष्ठ संख्या 17) के 'माघ' का अनुवाद *March* किया, जो कि प्रभावधर्मी अनुवाद है तथा मूल पाठ (पृष्ठ संख्या 72) के 'माघ' का अनुवाद *Magh* ही किया है। इसी

प्रकार मूल पाठ (पृष्ठ संख्या 211) के 'जेठ' शब्द का अनुवाद इन्होंने *July* किया और 'सावन', 'असाढ़', 'कार्तिक' 'फागुन', 'पूस' का अनुवाद क्रमशः *saavan, Asarh, Kartik, Phagun, poos* किया। श्रीवास्तव जी ने 'शब्द संग्रह' में अनुवाद में आये हुए हिन्दी महीनों के नाम पर भी परिचयात्मक टिप्पणी प्रस्तुत की है।

Phagun : twelfth month of the Hindu calendar, corresponding to February – March

Saavan : fifth month of the Hindu calender corresponding to July-August, monsoon season in north India

Asarh : fourth month of the Hindu calendar, corresponding to June-July

Kartik : the eight month of the Hindu calendar, corresponding to October-November

पालीवाल के अनुवाद विश्लेषण से स्पष्ट है कि मूल पाठ (पृष्ठ संख्या 17) के 'माघ' शब्द का अनुवाद *Magh* तथा (पृष्ठ संख्या 72) पर 'माघ' शब्द का अनुवाद नहीं किया है। वहीं पालीवाल ने 'सावन' का अनुवाद *Sawan* किया है जिसकी अंग्रेज़ी वर्तनी श्रीवास्तव से भिन्न है। इन्होंने 'सावन' के 'सा' के लिए *sa* तथा 'वन' के लिए *wan* जबकि श्रीवास्तव ने 'सा' के लिए *saa* तथा 'वन' के लिए *van* लिखा है। रीतारानी पालीवाल ने अन्य महीनों के नाम का अनुवाद ही नहीं किया है।

(iv) रहन-सहन/परिवहन के साधन

मूल पाठ	**पालीवाल**	**श्रीवास्तव**
खाट (पृ. 30)	cot (पृ. 28)	charpai (पृ. 33)
खाट (पृ. 85)	bed (पृ. 75)	Cot (पृ. 103)
धर्मशाले (पृ. 86)	dharmashala (पृ. 75)	inn (पृ. 104)
खाट-खटोली (पृ. 86)	अनूदित नहीं	cots and beds (पृ. 104)
पुआल के गद्दे (पृ. 106)	made of paddy straw (पृ. 95)	straw cushions (पृ. 129)
ख़स का पर्दा (पृ. 88)	'khas' curtain (पृ. 78)	curtain of khas (पृ. 107)
इक्का (पृ. 29)	ikka (पृ. 27)	ikka (पृ. 33)
ताँगे (पृ. 40)	tonga (पृ. 37)	tonga (पृ. 46)

मूल पाठ	पालीवाल	श्रीवास्तव
झोपड़े (पृ. 31)	hut (पृ. 29)	hut (पृ. 35)
पीतल के कटोरे (पृ. 101)	big brass bowl (पृ. 91)	brass cup (पृ. 122)
बग्घी (पृ. 208)	अनूदित नहीं	coaches (पृ. 259)
बैलगाड़ी (पृ.22)	अनूदित नहीं	bullock-cart (पृ. 23)
पीतल की थाली (पृ. 104)	brass thali (पृ. 94)	brass plate (पृ. 126)
बरतन-भाँड़े (पृ. 86)	अनूदित नहीं	pots and pans (पृ. 104)
घड़ा (पृ. 101)	pitcher (पृ. 91),	pail (पृ. 122)
खपरैल (पृ. 165)	अनूदित नहीं	earthen tiles (पृ. 204)
बखारें (पृ. 20)	अनूदित नहीं	silos/granaries (पृ. 21)
मटके (पृ. 20)	अनूदित नहीं	bin (पृ. 21)
कलसा (पृ. 112)	अनूदित नहीं	pail (पृ. 136)
कुल्हिया (पृ. 227)	अनूदित नहीं	sipping bowl (पृ. 344)
झाबे (पृ. 207)	अनूदित नहीं	baskets (पृ. 258)
तवा (पृ. 30)	अनूदित नहीं	iron skillet for cooking chapattis (पृ. 34)
थाल (पृ. 102)	thal (पृ. 93)	platter (पृ. 124)
लोटे (पृ. 104)	अनूदित नहीं	metal pitcher (पृ. 126)
पोटली (पृ. 100)	अनूदित नहीं	small bundle (पृ. 121)
(vii) उपकरण		
चरखे (पृ. 10)	spinning wheel (पृ. 9)	spinning wheel (पृ. 8)
मिट्टी के तेल की कुप्पी (पृ. 30)	a small kerosene lamp (पृ. 28)	A leather flask of kerosene (पृ. 35)
दिया (पृ. 65)	अनूदित नहीं	lamp (पृ. 78)
लैम्प (पृ. 65)	lamp (पृ. 56)	regular lamp (पृ. 78)
चूल्हा (पृ. 30)	अनूदित नहीं	stove (पृ. 34)
दीपक (पृ. 31)	small lamp (पृ. 29)	lamp (पृ. 35)

मूल पाठ	पालीवाल	श्रीवास्तव
ढोलक (पृ. 49)	अनूदित नहीं	अनूदित नहीं
लुटिया-डोर (पृ. 100)	अनूदित नहीं	small metal pail and rope (पृ. 121)
चिराग़ (पृ. 64)	lamp (पृ. 55)	lamp (पृ. 77)

'कर्मभूमि' के दोनों अंग्रेज़ी अनुवादों के आधार पर किये गये पारंपरिक शब्दों के तुलनात्मक अध्ययन से यह स्पष्ट है कि परंपरागत शब्दों के लिए प्रस्तुत किये गये अनुवाद में प्रेमचन्द की शैली का अनुसरण करने का प्रयत्न किया गया है, परन्तु किसी भी अनूदित पाठ में प्रेमचन्द की शैली का प्रतिफलन नहीं हुआ है। इसका कारण यह है कि दोनों अनुवादकों ने अपने व्यक्तित्व एवं शैली तथा लक्ष्यभाषा की प्रकृति के अनुरूप अनुवाद किया है। जिस कारण अनूदित कृतियों में प्रेमचन्द की शैली का पूर्ण प्रतिफलन नहीं हो पाया है।

पाठ आधारित पारंपरिक शब्दों के तुलनात्मक अध्ययन में यह सवाल भी महत्त्वपूर्ण है कि, क्या अनुवादकों की शैली के निर्धारण में अनूदित कृतियों के पाठकों का भी प्रभाव रहा है? इसका उत्तर पारंपरिक शब्दों के वर्गीकरण और उनके तुलनात्मक अध्ययन से मिल जाता है। रीतारानी पालीवाल का अनुवाद जहाँ अंग्रेज़ी भाषी भारतीय पाठकों के लिए किया गया प्रतीत होता है वहीं ललित श्रीवास्तव का अंग्रेज़ी भाषी विदेशी पाठकों के लिए।

उपर्युक्त निष्कर्ष का कारण है, ललित श्रीवास्तव द्वारा परंपरागत शब्दों की विशद् व्याख्या करना। जिससे आंग्ल-भाषी विदेशी व्यक्ति भारतीय परंपरा से परिचित हो सकें। जबकि पालीवाल ने अधिकांशत: इस प्रकार के शब्दों का यथातथ्य रूप में प्रतिस्थापन किया है और इनके लिए व्याख्या की आवश्यकता नहीं समझी, क्योंकि उनके द्वारा अनूदित कृति ऐसे आंग्ल-भाषी भारतीयों या विदेशियों के लिए है जो भारतीय परंपराओं से भली-भाँति परिचित हैं। परन्तु यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि पारंपरिक शब्दों के अनुवाद में अनुवादकद्वय ने किसी एक निश्चित शैली या सिद्धांत का प्रयोग नहीं किया है बल्कि जहाँ कहीं भी अननूद्यता की स्थिति उत्पन्न हुई वहाँ दोनों अनुवादकों ने इस प्रकार के शब्दों का लिप्यंतरण किया। यदि किसी शब्द का पालीवाल ने पाठधर्मी

अनुवाद किया तो श्रीवास्तव ने उसी शब्द का प्रभावधर्मी। जबकि किसी अन्य शब्द हेतु श्रीवास्तव ने पाठधर्मी तथा पालीवाल ने प्रभावधर्मी या फिर दोनों ने एक जैसी शैली का प्रयोग किया।

उपर्युक्त आधार पर यह कहना उचित होगा कि अनुवादकों को किसी एक शैली के दायरे में सीमित करना अनुचित होगा, क्योंकि इनकी अनुवाद शैली की धारा किसी एक निश्चित दिशा में नहीं बहती है। यह बहुमुखी और बहुआयामी है।

चतुर्थ अध्याय

अनूदित कृतियों का मूल पाठ के साथ तुलनात्मक अध्ययन

(क) 'कर्मभूमि' के अंग्रेज़ी अनुवादों का भाषिक विश्लेषण के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन

(ख) 'कर्मभूमि' के अंग्रेज़ी अनुवादों का सांस्कृतिक विश्लेषण के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन

'कर्मभूमि' के अंग्रेज़ी अनुवादों का भाषिक विश्लेषण के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन

'कर्मभूमि' प्रेमचन्द द्वारा रचित एक ऐसा उपन्यास है, जिसमें भारतीय जीवन की सामाजिक-सांस्कृतिक विशेषताओं की झलक दिखलाई पड़ती है। प्रमुख रूप से स्वाधीनता आंदोलन पर आधारित होने के बावजूद इसमें स्वाधीनता के मुद्दों को विशेष अभिव्यक्ति नहीं प्रदान की गयी है, बल्कि तत्कालीन भारतीय जीवन में व्याप्त अनेक समस्याओं को इस उपन्यास में उठाया गया है। यह उपन्यास इसलिए ही महत्त्वपूर्ण नहीं है कि इसमें तत्कालीन समाज में व्याप्त बुराइयों, आर्थिक संकट तथा राष्ट्रीय महत्त्व के मुद्दों का चित्रांकन है बल्कि यह कृति भाषा-शैली एवं शिल्प की दृष्टि से भी उतनी ही महत्त्वपूर्ण है और इसमें सर्जनात्मक स्तर पर उठाए गए सवाल आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं । साथ ही, यह कृति भारतीय समाज से संबद्ध है, जहाँ भाषा और बोलियाँ पग-पग पर बदलती रहती हैं। इसलिए इस उपन्यास के सन्दर्भ में भाषिक विश्लेषण का विशेष महत्त्व है।

साधारण अर्थों में भाषिक विश्लेषण के अन्तर्गत स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा के बीच की भाषिक व्यवस्था की तुलना की जाती है। सतही तौर पर यह सरल प्रतीत होता है किन्तु यह उतना ही जटिल है ज़ितना अनुवाद कर्म। अनुवादक पूरे मनोयोग से अनुवाद कर्म संपादित करता है तथा अपनी भाषागत समझ का पूर्ण दोहन इस क्रिया में करता है, परन्तु अनुवाद कर्म की जटिलता के कारण कुछ-न-कुछ कमियाँ शेष रह जाती हैं। अधिकतर अनुवादक इन कमियों को दूर करने का प्रयास करता है; क्योंकि सफल अनुवाद की कसौटी ही यह है कि अनुवादक इन समस्याओं को कितनी सफलता से हल करता है। भाषिक विश्लेषण अनुवाद कार्यों या अनुवादकों का छिद्रान्वेषण मात्र नहीं है, अपितु उसकी मौलिकता, सर्जनात्मकता का निरूपण करना भी है।

'कर्मभूमि' की अनूदित कृतियों के भाषिक विश्लेषण से संबंधित एक और महत्त्वपूर्ण तथ्य उल्लेखनीय है। मूल कृति प्रेमचंद द्वारा रचित है, जो विस्तृत भारत की सामाजिक-सांस्कृतिक विशेषताओं का अभिलेख है, जबकि अंग्रेज़ी में अनूदित दोनों कृतियाँ रीतारानी पालीवाल तथा ललित श्रीवास्तव द्वारा रचित हैं। प्रोफ़ेसर पालीवाल अनुवाद क्षेत्र से संबंधित कई रचनाएँ कर चुकी हैं, वहीं श्रीवास्तव जैविक विज्ञान से जुड़े हुए हैं तथा यह उनका पहला साहित्यिक कर्म है। अत: भाषिक विश्लेषण कि क्रिया में यह तथ्य भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि अनुवादकों के परिवेश और कार्यक्षेत्र की भिन्नता ने अनुवाद को किस सीमा तक प्रभावित किया है और इन्होंने

'कर्मभूमि' की भाषागत विशेषता को कितनी गहराई से आत्मसात् किया है क्योंकि 'सर्जनात्मक पुनर्गठन ही अनुवाद कहा जाता है।' [1]

मूल कृति का शीर्षक 'कर्मभूमि' है जबकि पालीवाल ने उसका अनुवाद *Karmabhoomi* और श्रीवास्तव ने *Karmabhumi* नाम से किया है। सतही स्तर पर उपर्युक्त दोनों शीर्षक एक जैसे प्रतीत होते हैं परन्तु वर्तनी के स्तर पर दोनों शीर्षकों में भिन्नता है –

मूल पाठ	पालीवाल	श्रीवास्तव
कर्मभूमि	*Karmabhoomi*	*Karmabhūmi*

उपर्युक्त शीर्षकों की तुलना से स्पष्ट होता है कि *'कर्मभूमि'* की वर्तनी में पालीवाल ने हिन्दी के दीर्घ स्वर 'ऊ' के लिए *OO* का प्रयोग कर हिन्दी के हस्व स्वरों से उनके अंतर को स्पष्ट किया है, जबकि श्रीवास्तव ने दीर्घ 'ऊ' के लिए मात्र $\bar{u}$ का प्रयोग किया है।

'कर्मभूमि' के शीर्षक के विषय में श्रीवास्तव ने कहा है -

I have loosely translated it as The Field of action ;which ties in with the Urdu title of the book, Maidaane-amal". [2]

जैसा कि उपर्युक्त कथन से स्पष्ट होता है कि श्रीवास्तव ने 'कर्मभूमि' शीर्षक का अनुवाद *Field of action* किया। किंतु पुस्तक इस शीर्षक नाम से प्रकाशित न होकर *Karmabhumi* नाम से क्यों प्रकाशित हुई, इसका कारण खोजना कठिन कार्य है। इसका एक कारण शायद यह हो सकता है कि भारतीय दर्शन पर आधारित होने के कारण इसके लिए व्यापक समझ की आवश्यकता है इसलिए परिचय में इन्होंने इसे *Field of action* के द्वारा समझाने का प्रयत्न किया। दूसरा कारण यह हो सकता है कि प्रेमचन्द की 'कर्मभूमि' के प्रभाव को पाठक तक यथावत् पहुँचाने के उद्देश्य ने इन्हें मुख्य पृष्ठ पर इसका शीर्षक *Karmabhumi* रखने के लिए प्रेरित किया हो।

हिन्दी के 'कर्म' शब्द को अंग्रेज़ी में *act, Work, occupation, deed, business, fate, destiny, Hindu sacrifice* तथा 'भूमि' को *Earth, Ground, Field* कहा जाता है।

कर्मसिद्धांत के अनुसार कर्तव्य के लिए जो भी आवश्यक है उसे बिना दुविधा के करना चाहिए। इस सिद्धांत की व्याख्या भगवान कृष्ण द्वारा भगवद्गीता में महाभारत के युद्ध के समय की गयी थी। जब महान योद्धा अर्जुन युद्ध भूमि में अपने रिश्तेदारों, चचेरे भाइयों, मित्रों और सम्मान्य गुरुओं, को देखकर विचलित हो गये और अपना धनुष-बाण फेंक दिया और कृष्ण से कहा, कि वह युद्ध नहीं कर सकते; तब भगवान कृष्ण ने अर्जुन को स्पष्ट किया कि यह उसका कर्तव्य है

कि परिणाम कि चिन्ता किए बिना युद्ध करे, क्योंकि एक योद्धा के रूप में उसका धर्म है कि वह इस कार्य को करे, यही कर्म है।

प्रेमचन्द के इस उपन्यास में मानव जीवन का चित्रण 'कर्मभूमि' के रूप में किया गया है, जिसमें मनुष्य के चरित्र और भाग्य बनते हैं तथा उनके कार्यों से उद्घाटित होते हैं। इस प्रकार, 'कर्मभूमि' शीर्षक व्यापक अर्थ गहनता तथा भारतीय दर्शन पर आधारित होने के कारण अननूद्य है। ऐसा लगता है कि इस कारण ही पालीवाल ने इसका अनुवाद नहीं किया और ललित श्रीवास्तव ने *Field of Action* नाम से किया भी तो मुख्य पृष्ठ पर उसे रखने का उपक्रम नहीं कर सके क्योंकि यह ग्रन्थि तो अवश्य ही रही होगी कि *'कर्मभूमि'* से उचित शीर्षक शायद कोई नहीं हो सकता है।

पुस्तक की शुरूआत निम्नलिखित पंक्तियों से होती है -

''हमारे स्कूलों और कॉलेजों में जिस तत्परता से फ़ीस वसूल की जाती है, शायद मालगुज़ारी भी उतनी सख़्ती से नहीं वसूल की जाती है।'' [3]

इन पंक्तियों का अनुवाद, अनुवादकद्वय ने इस प्रकार किया है:

रीतारानी पालीवाल -

"Even the Malgujari (revenue collected from landlords) is not collected with that strictness with which the fees in our school and colleges are collected." [4]

ललित श्रीवास्तव -

"Even land taxes are probably not collected as ruthlessly as school fees are collected in our schools and colleges." [5]

अनुवाद के प्रस्तुत उदाहरण में सबसे बड़ी बात यह है कि इन्होंने मूल पाठ के प्रारम्भ में प्रयुक्त क्रिया रूपों के काल वर्तमानकाल के विपरीत भूतकाल के प्रयोग की व्यवस्था अपनाई है। मूल पाठ की शुरूआत वर्तमानकाल से करना अस्वाभाविक नहीं है, क्योंकि प्रेमचंद जब यह रचना लिख रहे थे, तब वह बीसवीं शताब्दी का चौथा दशक था और वे अपने समय की घटनाओं को ही लेखनबद्ध कर रहे थे। इसलिए यह स्वाभाविक था कि उपन्यास का अधिकांश घटनाक्रम वर्तमानकालिक क्रिया के रूप में हो। वहीं अनुवादकद्वयों ने इक्कीसवीं सदी के प्रथम दशक में अपने-अपने अनुवाद कर्म को सम्पादित किया और क्योंकि वे पूर्व में हुई घटनाओं का अनुवाद कर रहे थे, इसलिए उन्होंने अधिकांशत: क्रिया रूप के काल, भूतकाल के प्रयोग द्वारा 'कर्मभूमि' को समसामयिक रूप से प्रासंगिक बनाने का प्रयत्न किया है।

उपर्युक्त तुलनात्मक अध्ययन के पश्चात् परिच्छेद की दृष्टि से तुलना करने पर यह स्पष्ट होता है कि मूल कृति में पाँच भाग और छप्पन परिच्छेद हैं। जबकि पालीवाल ने अनूदित कृति को मात्र इक्कीस परिच्छेदों में बाँटा है, ऐसे में यह स्वाभाविक है कि रीतारानी पालीवाल ने अलग-अलग घटनाओं को एक साथ जोड़ दिया और कई घटनाओं का अनुवाद अनावश्यक समझकर छोड़ दिया । उदाहरण के लिए, रीतारानी पालीवाल का छठा परिच्छेद यहाँ से आरम्भ होता है -

"Amarkant not only stopped speaking but also participating in the public meetings." [6]

उपर्युक्त पाठांश, मूल पाठ में सातवें परिच्छेद में है । अनुवादिका रीतारानी पालीवाल ने मूल पाठ के पृष्ठ बीस के तृतीय पैराग्राफ़ से लेकर पृष्ठ तेइस के छठे परिच्छेद के द्वितीय पैराग्राफ़ का अनुवाद छोड़ दिया है। इस कारण पाठक को अनूदित कृति में कथा-विच्छेद का आभास होता है क्योंकि उपन्यास का कथा-संसार बहुत विशाल होता है। कई कथाएँ छोटी पर महत्त्वपूर्ण होती हैं, जो मुख्य कथा के साथ संलग्न होती हैं। ऐसे में अनुवादक अगर इस बात की अनदेखी करता है तब कृति के पाठक से असम्बद्ध होने की सम्भावना रहती है।

रीतारानी पालीवाल द्वारा अननूदित अंश में, कॉलेज के कुछ छात्रों के साथ सलीम, अमरकांत और अध्यापक डॉ. शान्तिकुमार द्वारा देहात की आर्थिक दशा की जाँच-पड़ताल के दौरान गोरों द्वारा अबला मुन्नी के बलात्कार की अनहोनी घटना घटित होती है, जिससे उत्तेजित छात्रों और गोरों में हाथा-पाई होती है और डॉ. शान्तिकुमार को गोली लग जाती है। इस उपन्यास में स्त्री समस्या की दृष्टि से मुन्नी का प्रसंग महत्त्वपूर्ण है । परन्तु अनुवादिका जो स्वयं महिला हैं , बावजूद इसके इस प्रसंग का अनुवाद न करने का औचित्य समझना थोड़ा मुश्किल है।

पालीवाल ने कई परिच्छेदों को मिलाकर उपन्यास को संक्षिप्त करने का प्रयास किया है। इसके लिए इन्होंने कई पैराग्राफ़ का अनुवाद छोड़ दिया है। उदाहरणार्थ, मूल पाठ में मुन्नी और डॉ.शान्तिकुमार के बीच का वार्तालाप –

'मुझसे थोड़ी देर पहले मिला था।'

'क्या कहा था?'

'यही कि मैं उसे अपने साथ ले जाऊँगा और उसे अपने घर की देवी समझूँगा'।

'उसके साथ कोई बालक भी था?'

'हाँ, तुम्हारा छोटा बच्चा उसकी गोद में था।'

'बालक बहुत दुबला हो गया होगा?'

'नहीं, मुझे वह हृष्ट-पुष्ट दीखता था'

'प्रसन्न भी था?'

'हाँ, ख़ूब हँस रहा था।'

'अम्माँ-अम्माँ तो न करता होगा?'

'मेरे सामने तो नहीं रोया।'

'अब तो चाहे चलने लगा हो?'

'गोद में था, पर ऐसा मालूम होता था कि चलता होगा।'

'अच्छा, उसके बाप की क्या हालत थी? बहुत दुबले हो गये हैं?' [7]

रीतारानी पालीवाल ने उक्त पाठ को पर्याप्त संक्षिप्त कर दिया -

'He met me sometime back.'
'What was he saying?'
'That I will take her with me and regard her as a goddess.'
'Did he have any child with him.
'Yes, your young child was in his lap.' [8]

वहीं मूल कृति की इन्हीं पंक्तियों का ललित श्रीवास्तव ने प्रभावधर्मी एवं पूर्ण अनुवाद किया है-

"I met him a short while ago.'
'What did he say?'
'Only that he will take you with him and will regard you as the goddess of the house'.
'Was there a child also with him?'
'Yes, your little boy was in his arms.'
'The child must have become very thin?'
'No, he seemed quiet healthy to me.'
'Did he look happy as well?'
'Yes, he was laughing lustily.'
'He was not crying for his mother?'
'He didn't cry in my presence'
'He is probably walking by now?'
'He was in his father's arms. But it is possible that he is walking.'
'Achcha, how was his father? He must have lost a lot of weight?'' [9]

इन उदाहरणों के सन्दर्भ में जो तथ्य महत्त्वपूर्ण है, वह यह कि रीतारानी पालीवाल ने मुन्नी के मनोभावों, उसके ममतामयी स्वरूप और उसकी पीड़ा को, वह महत्त्व नहीं दिया जो प्रेमचन्द ने दिया है। मूल कृति के गद्यांश में माँ की छटपटाहट दिखती है, जबकी पालीवाल ने इसे बीच में ही छोड़

दिया है वहीं श्रीवास्तव ने सम्पूर्ण वार्तालाप का अनुवाद किया है। यहाँ यह उल्लेख करना महत्त्वपूर्ण हो जाता है कि जहाँ रीतारानी पालीवाल ने 'कर्मभूमि' को इक्कीस परिच्छेदों में बाँटा है वहीं ललित श्रीवास्तव ने इसे छप्पन अध्यायों में बाँटा है।

इतना ही नहीं, उपर्युक्त के अतिरिक्त ये दोनों अनुवाद एक और दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण हैं और वह है शब्द। प्रेमचन्द के लेखन की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है विभिन्न प्रकार के शब्दों का प्रयोग। 'कर्मभूमि' में प्रेमचन्द ने सभी तरह के शब्द जैसे- तत्सम, तद्भव, देशज एवं स्थानीय, अरबी-फ़ारसी का प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया है। इनके प्रयोग से प्रेमचन्द ने इस उपन्यास को जीवंत कर दिया है। प्रेमचन्द द्वारा 'कर्मभूमि' में प्रयुक्त शब्दों तथा उनके लिए दोनों अनुवादकों द्वारा अनूदित शब्दों का उदाहरण तुलनात्मक दृष्टि से विशेष रूप से दृष्टव्य है -

क - तत्सम शब्द

1. मूल पाठ - शिक्षालय (पृ.5)
   रीतारानी पालीवाल - educational Institution (पृ.1)
   ललित श्रीवास्तव - educational Institution (पृ.1)
   तुलनात्मक अध्ययन - अनुवादकों ने इस शब्द का प्रभावधर्मी अनुवाद किया है।
2. मूल पाठ - मनस्विता (पृ.6)
   रीतारानी पालीवाल - thoughtfulness (पृ.3)
   ललित श्रीवास्तव - warmth & compassion (पृ.3)
   तुलनात्मक अध्ययन - पालीवाल ने शब्दानुवाद किया है जबकि श्रीवास्तव ने भावानुवाद किया है।

   प्रस्तावित - यदि श्रीवास्तव ने *thoughtfulness* या *strong mindness* का प्रयोग किया होता तो अनुवाद अच्छा होता ।
3. मूल पाठ - अनुग्रह (पृ.7)
   रीतारानी पालीवाल - iratitude (पृ.4)
   ललित श्रीवास्तव - kindness (पृ.3)
   तुलनात्मक अध्ययन - दोनों अनुवादकों ने प्रभावधर्मी अनुवाद किया है।
4. मूल पाठ - द्वेष (पृ.8)

रीतारानी पालीवाल - dislike (पृ.9)

ललित श्रीवास्तव - hated (पृ.5)

तुलनात्मक अध्ययन - अनुवादकद्वय ने प्रभावधर्मी अनुवाद किया है।

5. मूल पाठ - संस्कार (पृ.9)

रीतारानी पालीवाल - अनूदित नहीं

ललित श्रीवास्तव - अनूदित नहीं

तुलनात्मक अध्ययन - रीतारानी पालीवाल तथा ललित श्रीवास्तव ने पूर्ण वाक्य के भावों का प्रभावधर्मी अनुवाद किया और 'संस्कार' शब्द के अननूद्य होने के कारण उसे छोड़ दिया,यथा -

मूल पाठ -

"त्याग की जगह भोग, शील की जगह तेज, कोमल की जगह तीव्र का संस्कार किया था।" [10]

रीतारानी पालीवाल -

"Enjoyment instead of renunciation, fiery instead of politeness, vehemence instead of softness have been formative features of her personality."[11]

ललित श्रीवास्तव -

" She was severe instead of polite and sharp instead of tender".[12]

6. मूल पाठ - विमातृत्व (पृ.9)

रीतारानी पालीवाल - अनूदित नहीं

ललित श्रीवास्तव - stepmother's nature (पृ.6)

तुलनात्मक अध्ययन-अनुवादकद्वय ने सम्पूर्ण वाक्य का अंग्रेज़ी सभ्यता के अनुकूल प्रभावधर्मी अनुवाद किया है, यथा -

मूल पाठ -

"भाई-बहन में यह स्नेह यहाँ तक बढ़ा कि अन्त में विमातृत्व से मातृत्व को भी परास्त कर दिया।"[13]

रीतारानी पालीवाल -

"The love between the brother and sister grew to such an extent that the mother could not tolerate it." [14]

ललित श्रीवास्तव -

"The affection between brother and sister grew to such an extent that finally the stempmother's nature overcame that of the mother" [15]

दोनों अनूदित गद्यांशों की मूल पाठ से तुलना करने पर यह स्पष्ट होता है कि इन्होंने इस शब्द का अनुवाद में लोप कर दिया है।

7. मूल पाठ - पुरुषार्थ (पृ.9)
   रीतारानी पालीवाल - manly valour (पृ.8)
   ललित श्रीवास्तव - masculinity (पृ.7)

   तुलनात्मक अध्ययन - स्रोत भाषा के शब्दों का लक्ष्य भाषा की विदेशी संस्कृति के अनुरूप अनुवाद किया गया है।

   प्रस्तावित- यहाँ पुरुषार्थ शब्द का सटीक अनुवाद करना कठिन है, फिर भी एक पाद-टिप्पणी या कोष्ठक में इसे निम्न प्रकार से समझाया जा सकता था-

   "The object of a man's creation and existence" [16]

8. मूल पाठ - स्त्रीत्व (पृ.9)
   रीतारानी पालीवाल - femininity (पृ.8)
   ललित श्रीवास्तव - femininity (पृ.7)
   तुलनात्मक अध्ययन - लक्ष्यभाषा की संस्कृति के अनुरूप अनुवाद किया है।
9. मूल पाठ - विरक्त (पृ.12)
   रीतारानी पालीवाल - feeling so dejected (पृ.12)
   ललित श्रीवास्तव - felt forlornly (पृ.11)

   तुलनात्मक अध्ययन - पालीवाल ने 'विरक्त' के लिए *feeling so dejected* और श्रीवास्तव ने *felt forlornly* का प्रयोग किया है। ये दोनों ही अनुवाद मूल 'विरक्त' को व्यक्त करने में असमर्थ हैं।

   प्रस्तावित- 'विरक्त' के लिए व्याख्यात्मक अनुवाद की शैली का प्रयोग किया जा सकता था, यथा-

   'Amarkant felt free from worldly attachment.'

   जबकि ललित श्रीवास्तव ने इसके लिए प्रयोग किया है -

"Amarkant felt forlornly " [17]

वहीं रीतारानी पालीवाल ने इसी को निम्न प्रकार से लिखा है -

"Amarkant was feeling so dejected"[18]

परन्तु उपरोक्त दोनों अनुवाद कर्म से 'विरक्त' का जो अर्थ व्यंजित हो रहा है, मूल से किंचित भिन्न है, क्योंकि मूल में जिस अर्थ की व्यंजना हो रही है, वह है सांसारिक बन्धनों से मुक्ति । "अमरकांत ऐसा विरक्त हो रहा था।"[19]

10. मूल पाठ	-	उपार्जन	(पृ.15)
रीतारानी पालीवाल	-	अनूदित नहीं	
ललित श्रीवास्तव	-	earn	(पृ.13)
तुलनात्मक अध्ययन	-	प्रभावधर्मी अनुवाद ।	

ख - तद्भव शब्द

'कर्मभूमि' में प्रेमचन्द ने विभिन्न प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया है। इस कृति में प्रेमचन्द के शब्द संस्कार को हम भली-भाँति पहचान सकते हैं। इसमें इन्होंने हर वर्ग की भाषा का प्रयोग किया है। शब्दों की सामाजिक पहुँच होती है। उच्चवर्ग, निम्न वर्ग के लोगों के साथ किस तरह का बर्ताव करता है, वह उनके शब्दों के चयन तथा व्यवहार से स्पष्ट देखा जा सकता है। यह अंग्रेज़ी में नहीं हो सकता है। जो अनुवादक तद्भव शब्दों को ठीक से अनूदित करता है वह अनुवादक उतना ही अच्छा होता है तथा उसे पाठकीय स्वीकार्यता भी प्राप्त होती है।

दोनों अनुवादों का तुलनात्मक अध्ययन इस दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण हो जाता है कि मूल कृति में प्रयुक्त तद्भव शब्दों का अनुवादकों ने किस हद तक सफल अनुवाद किया है। तद्भव शब्द संबंधी कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं -

1. मूल पाठ	-	गिरस्ती (गृहस्थी)	(पृ.34)
रीतारानी पालीवाल	-	अनूदित नहीं	
ललित श्रीवास्तव	-	household	(पृ.39)

तुलनात्मक अध्ययन - पालीवाल ने इस शब्द का अनुवाद ही नहीं किया जबकि श्रीवास्तव ने *household* शब्द के द्वारा सामान्यीकरण की प्रवृत्ति अपनायी है। जिस कारण इस शब्द की संकल्पना सामने नहीं आ पाती वरन् *household* उसे बिगाड़कर परिवर्तित रूप में प्रस्तुत करता है।

2. मूल पाठ - बरखा (वर्षा) (पृ.46)

रीतारानी पालीवाल - अनूदित नहीं

ललित श्रीवास्तव - showered (पृ. 54)

तुलनात्मक अध्ययन - मूल पाठ में प्रयुक्त 'बरखा' शब्द में निहित अर्थ तथा श्रीवास्तव द्वारा उसके लिए प्रयुक्त शब्द *showered* के अन्तर को समझने के लिए उदाहरण दृष्टव्य है-

मूल पाठ -

"मेरे भाई-बहनों मेरे गले में फूलों की माला भी डाल दें, मुझ पर अशर्फ़ियों की बरखा भी की जाए, तो क्या यहाँ से मैं अपने घर जाऊँगी?" [20]

ललित श्रीवास्तव -

"my brothers and sisters put a garland of flowers around my neck, and even if gold coins are showered upon me, would I be able to go home ? [21]

उपरोक्त अनुवाद कर्म में ललित श्रीवास्तव ने शब्द-दर-शब्द अनुवाद के सिद्धांत का पालन किया और अशर्फ़ियों की बरखा का भावानुवाद न करके मात्र शब्दानुवाद किया है । जिस कारण अनुवाद त्रुटिपूर्ण हो गया है। जबकि मुन्नी का आशय इन पंक्तियों में यह है कि यदि *उसे बहुत सारा धन दिया जाय।*

3. मूल पाठ - उमिर (उम्र) (पृ.105)

रीतारानी पालीवाल - अनूदित नहीं

ललित श्रीवास्तव - अनूदित नहीं

तुलनात्मक अध्ययन - दोनों ने इस शब्द का अनुवाद नहीं किया। कहीं-कहीं इन्होंने स्रोत भाषा के इस प्रकार के शब्दों का अनुवाद में लोप कर दिया है। यह प्रवृत्ति पालीवाल में ज़्यादा दिखाई पड़ती है।

4. मूल पाठ - भगत (भक्त) (पृ.105)

रीतारानी पालीवाल - अनूदित नहीं

ललित श्रीवास्तव - pious, holy people (पृ.127)

तुलनात्मक अध्ययन- पालीवाल ने उपन्यास के संक्षिप्तीकरण की अपनी प्रवृत्ति के कारण इस शब्द का अनुवाद छोड़ दिया है वहीं श्रीवास्तव ने प्रभावधर्मी अनुवाद किया है।

5. मूल पाठ - सिकार (पृ. 105)

रीतारानी पालीवाल - अनूदित नहीं

ललित श्रीवास्तव - game (पृ.127)

तुलनात्मक अध्ययन - पालीवाल ने इस हिस्से का अनुवाद नहीं किया जबकि श्रीवास्तव ने त्रुटिपूर्ण अनुवाद कर दिया, क्योंकि इन्होंने 'सिकार' को 'शिकार' खेलना के सन्दर्भ में अनूदित कर दिया है, यथा -

"मैं तो दारू-सिकार छूता भी नहीं काकी।[22]

"I don't even touch liquor or game, auntie," [23]

6. मूल पाठ - पत्तर (पत्र) (पृ. 105)

रीतारानी पालीवाल - अनूदित नहीं

ललित श्रीवास्तव - letter, note (पृ. 127)

तुलनात्मक अध्ययन - श्रीवास्तव ने प्रभावधर्मी अनुवाद किया है।

7. मूल पाठ - चमार (चर्मकार) (पृ.104)

रीतारानी पालीवाल - chamar (पृ.94)

ललित श्रीवास्तव - Chamaar (पृ.126)

तुलनात्मक अध्ययन - इस प्रकार के तद्भव शब्द क्षेत्रीयता के साथ सांस्कृतिक विशेषता रखते हैं, अत: इनके अनुवाद में अनुवादक को सबसे ज़्यादा कठिनाई का अनुभव होता है। इस कारण अनुवादकों ने पाठधर्मी अनुवाद किया।

8. मूल पाठ - मरजाद (मर्यादा) (पृ.107)

रीतारानी पालीवाल - अनूदित नहीं

ललित श्रीवास्तव - respectable (पृ.130)

तुलनात्मक अध्ययन - श्रीवास्तव ने ग़लत अनुवाद किया है।

प्रस्तावित - यदि यहाँ *propriety* शब्द का प्रयोग किया गया होता तो अनुवाद दोषमुक्त होता।

9. मूल पाठ - पूरब जनम (पूर्व जन्म) (पृ.107)

रीतारानी पालीवाल - अनूदित नहीं

ललित श्रीवास्तव - previous incarnation (पृ.130)

तुलनात्मक अध्ययन - श्रीवास्तव ने भावानुवाद किया है जो त्रुटिपूर्ण प्रतीत होता है। *incarnation शब्द से 'अवतार'* या किसी के प्रकट होने की सूचना मिलती है। यहाँ *previous birth* पद ही अधिक उपयुक्त होता।

प्रस्तावित - previous birth

10. मूल पाठ - मरम (मर्म) (107 पृ.)

रीतारानी पालीवाल - अनूदित नहीं

ललित श्रीवास्तव - understand (पृ. 130)

तुलनात्मक अध्ययन- भावमूलक शब्द को कर्म में बदल दिया है। अत: श्रीवास्तव द्वारा अनूदित इस शब्द को स्वीकार करना कठिन है।

11. मूल पाठ - मूरख (मूर्ख) (पृ.108)

रीतारानी पालीवाल - अनूदित नहीं

ललित श्रीवास्तव - fool (पृ.130)

तुलनात्मक अध्ययन - श्रीवास्तव ने प्रभावधर्मी अनुवाद किया है, जबकि पालीवाल ने छोड़ दिया है।

12. मूल पाठ - छत्तरी (पृ. 108)

पालीवाल - अनूदित नहीं

ललित श्रीवास्तव - Kshatriyas (पृ. 131)

तुलनात्मक अध्ययन - ललित श्रीवास्तव ने, इस तद्भव शब्द का पाठधर्मी तत्समी अनुवाद किया है। साथ ही, इस बात का भी पता नहीं चलता है कि यह शब्द एक निम्नवर्गीय पात्र द्वारा कहा गया है, जिसमें क्षेत्रीयता का भी पुट है।

13. मूल पाठ - पुरबज (पूर्वज) (पृ. 108)

रीतारानी पालीवाल - अनूदित नहीं

ललित श्रीवास्तव - ancestor (पृ. 131)

तुलनात्मक अध्ययन - यहाँ ललित श्रीवास्तव ने स्रोत भाषा के शब्द का निजी संस्कृति के अनुरूप लक्ष्य भाषा में अनुवाद किया है। उदाहरणार्थ- "तो हम कह देंगे, हमारे पुरबज छत्तरी

थे, हालाँकि अपने को छत्तरी-बंस कहते लाज आती है। सुनते हैं, छत्तरी लोगों ने मुसलमान बादशाहों को अपनी बेटियाँ ब्याही थीं। अभी कुछ जलपान तो न किया होगा भैया?" [24]

ललित श्रीवास्तव ने उपर्युक्त गद्यांश का अनुवाद निम्नलिखित ढंग से किया है -

"Then we will say our *ancestors* were *Kshatriyas* although we are a bit ashamed to call ourselves so. We have heard that the *Kshatriyas* gave away their daughters in *marriage* to Muslim kings. You mustn't have had any breakfast, bhaiya." [25]

उपर्युक्त अनुवाद की मूल पाठ के साथ तुलना से यह स्पष्ट होता है कि अनुवादक ने इन पंक्तियों में प्रयुक्त कुछ शब्दों जैसे - पुरबज, ब्याही के लिए क्रमशः *ancestors, marriage* का प्रयोग किया है। जो कि स्रोत भाषा के शब्दों का निजी संस्कृति के अनुरूप लक्ष्य भाषा में अनुवाद की पद्धति का अनुसरण है। जबकि छत्तरी, मुसलमान का तत्समी रूप में लिप्यंतरण कर दिया है।

14. मूल पाठ - जस (यश) (पृ.111)
रीतारानी पालीवाल - praising (पृ.97)
ललित श्रीवास्तव - praises (पृ.134)

तुलनात्मक अध्ययन- दोनों अनुवादकों द्वारा प्रभावधर्मी अनुवाद का अच्छा उदाहरण है।

15. मूल पाठ - धरम (धर्म) (पृ.122)
रीतारानी पालीवाल - अनूदित नहीं
ललित श्रीवास्तव - dharma (पृ. 149)

तुलनात्मक अध्ययन - श्रीवास्तव ने पाठधर्मी अनुवाद का सहारा लिया है।

16. मूल पाठ - सासतर (शास्त्र) (पृ.141)
रीतारानी पालीवाल - scriptures (पृ.110)
ललित श्रीवास्तव - shastras (पृ.174)

तुलनात्मक अध्ययन - पालीवाल ने प्रभावधर्मी अनुवाद किया जबकि श्रीवास्तव ने पाठधर्मी अनुवाद किया है।

17. मूल पाठ - सोहागरात (पृ.178)
रीतारानी पालीवाल - अनूदित नहीं
ललित श्रीवास्तव - wedding night (पृ. 221)

तुलनात्मक अध्ययन - श्रीवास्तव ने प्रभावधर्मी अनुवाद को ध्यान में रखकर अनुवाद किया है।

18. मूल पाठ - बखत (वक़्त) (पृ.181)

रीतारानी पालीवाल - अनूदित नहीं

ललित श्रीवास्तव - time (पृ. 226)

तुलनात्मक अध्ययन - श्रीवास्तव ने प्रभावधर्मी अनुवाद किया जबकि पालीवाल ने सम्पूर्ण वाक्य का भावानुवाद किया है।

ग- देशज और स्थानीय शब्द

देशज शब्द और स्थानीय शब्द विभिन्न भाषा-भाषियों द्वारा काल के अबाध प्रवाह में निर्मित एवं व्यवहृत शब्द हैं जो इनके आदिम प्रयोगकर्त्ताओं द्वारा इस्तेमाल में लाए जाते थे। बाद में ये पहले लोक में और फिर शास्त्र (साहित्य) में भी खप जाते हैं । 'कर्मभूमि' में इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग बहुतायत से दिखाई देता है। 'कर्मभूमि' का भाषा क्षेत्र पूर्वी उत्तर प्रदेश का है और यही कारण है कि इसमें बनारस के आस-पास प्रयुक्त भाषा एवं बोलियों में स्थानीय शब्दों का प्रयोग किया जाता है, जैसे -

1. मूल पाठ - आढ़त (पृ.8)

रीतारानी पालीवाल - wholesale (पृ.5)

ललित श्रीवास्तव - agency (पृ.5)

तुलनात्मक अध्ययन - पालीवाल ने सामान्यीकरण की प्रवृत्ति अपनायी है तथा श्रीवास्तव ने इसका व्यवहारिक एवं व्यापारिक अनुवाद किया है। उदाहरणार्थ-

मूल पाठ -

"पहले उनकी एक छोटी-सी हल्दी की आढ़त थी। हल्दी से गुड़ और चावल की बारी आयी। तीन बरस तक लगातार उनके व्यापार का क्षेत्र बढ़ता ही गया। अब आढ़तें बन्द कर दी थीं।"[26]

रीतारानी पालीवाल -

" In the beginning, he had a *small wholesale* dealing in turmeric. From turmeric it extended to *jaggery* and rice. For three years the range of his trade kept on expanding.Now he has closed the wholesale business."[27]

ललित श्रीवास्तव -

"To begin with, he had a *small agency* for selling turmeric on a commission basis. Soon he added brown sugar and rice agencies, and the scope of his business expanded continuously for three years. Now he had closed the agencies." [28]

मूल पाठ के उपर्युक्त गद्यांश में पालीवाल ने 'आढ़त' के लिए *wholesale* तथा श्रीवास्तव ने *agency* शब्द का प्रयोग किया है। दोनों अनुवादकों ने विदेशी संस्कृति के अनुरूप व्याख्यात्मक अनुवाद किया है। इस अनुवाद में जो सबसे बड़ी कमी दिखाई देती है वह है 'गुड़' के लिए श्रीवास्तव द्वारा *brown sugar* का अनुवाद करना, क्योंकि *brown sugar* का अर्थ भूरी शक्कर या बूरा होता है। जबकि *गुड़* उससे भिन्न गन्ने का एक उत्पाद है, जो ग्रामीण क्षेत्र में प्राय: गन्ने की कटाई के बाद, गन्ने को पेरकर उससे निकले रस को आग की भट्ठी पर पकाने से तैयार होता है।

इस प्रकार के स्थानीय शब्दों से उत्पन्न समस्या और अनुवादकद्वय द्वारा उनके अनुवाद के कुछ अन्य उदाहरण ध्यान देने योग्य हैं -

2. मूल पाठ - पहलौंठी (पृ.39)
   रीतारानी पालीवाल - अनूदित नहीं
   ललित श्रीवास्तव - first delivery (पृ.45)
   तुलनात्मक अध्ययन - इस प्रकार के शब्दों के लिए इससे बेहतर अनुवाद नहीं किया जा सकता है।
3. मूल पाठ - कनटोप (पृ.151)
   रीतारानी पालीवाल - अनूदित नहीं
   ललित श्रीवास्तव - hood (पृ.188)
   तुलनात्मक अध्ययन - पालीवाल ने उपन्यास के इस हिस्से का अनुवाद नहीं किया, जबकि श्रीवास्तव ने सामान्यीकरण कर दिया है। 'कनटोप' शब्द के समतुल्य अंग्रेज़ी भाषा में कोई शब्द नहीं है क्योंकि कनटोप एक ऐसी स्थानीय टोपी का प्रकार है जिसमें सिर के साथ कान भी ढँका रहता है। परन्तु श्रीवास्तव ने *hood* शब्द का प्रयोग किया जिसका सामान्य अर्थ टोपी होता है।

घ- अरबी-फ़ारसी के शब्द

तत्सम, तद्भव, देशज एवं स्थानीय शब्दों के साथ ही प्रेमचन्द अरबी-फ़ारसी के शब्दों का प्रयोग भी बहुतायत में करते हैं। इसका कारण यह है कि हिन्दी में लिखना प्रारम्भ करने से पूर्व वे उर्दू में लिखा करते थे। जिस कारण इनकी हिन्दी, उर्दूमिश्रित है। उदाहरणस्वरूप 'कर्मभूमि' का निम्नलिखित गद्यांश उल्लेखनीय है-

"मेरे ख़यालात तुम्हें मालूम हैं। यह केराये की तालीम हमारे कैरेक्टर को तबाह किए डालती है। हमने तालीम को भी एक व्यापार बना लिया है। व्यापार में ज़्यादा पूँजी लगाओ, ज़्यादा नफ़ा होगा। तालीम में भी ख़र्च ज़्यादा करो, ज़्यादा ऊँचा ओहदा पाओगे। मैं चाहता हूँ, ऊँची-से-ऊँची तालीम सबके लिए मुआफ़ हो; ताकि ग़रीब-से-ग़रीब आदमी भी ऊँची-से-ऊँची लियाक़त हासिल कर सके और ऊँचे-से-ऊँचा ओहदा पा सके।" [29]

उपर्युक्त पंक्तियाँ प्रेमचंद की अरबी-फ़ारसी-मिश्रित हिन्दी का उदाहरण मात्र हैं। इस प्रकार के अनेकों उदाहरण 'कर्मभूमि' में हमें देखने को मिल जायेंगे। यह प्रेमचंद की भाषा शैली का अहम हिस्सा है परन्तु यह किसी भी अनुवादक के लिए समस्या का कारण हो सकता है। देखना यह है कि दोनों अनुवादक इन समस्याओं से कहाँ तक बच पाये हैं, यथा -

मूल पाठ -

''यह तुम्हारी शरारत मालूम होती है। इसीलिए तुम मुझे यहाँ लाए थे? आख़िर क्या नतीजा होगा। मुफ़्त की ज़िल्लत होगी मेरी। मुझे ज़लील कराने से तुम्हें कुछ मिल जायेगा?'' [30]

रीतारानी पालीवाल -

"It seems to be your mischief. For this you have brought me here? After all, what will be the result ? What will you achieve if I get humiliated ?" [31]

ललित श्रीवास्तव -

"It seems like your doing.You brought me here with this purpose. What good will it do to bring my father here? Will you get anything out of my humiliation?'' [32]

पालीवाल एवं श्रीवास्तव ने इस प्रकार के शब्दों के लिए किसी विशेष पद्धती का सहारा नहीं लिया बल्कि इन्होंने इस प्रकार के शब्दों के अनुवाद में सामान्यीकरण का सहारा लिया। जिसके कारण अनुवाद कर्म में सपाटता आ गयी है। जहाँ प्रेमचन्द ने इन शब्दों के प्रयोग से उपन्यास में तत्कालीन समय को प्रतिबिंबित किया है वहीं अनूदित कृतियाँ इस विशेषता से रहित हैं।

'कर्मभूमि' इस दृष्टि से ही महत्त्वपूर्ण नहीं है कि इसमें विभिन्न प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया गया है बल्कि यह अल्पविराम और अर्द्धविराम चिह्नों की दृष्टि से भी बहुत महत्त्वपूर्ण है। प्रेमचन्द की भाषा में वह जादू था जो पाठक के मन मस्तिष्क पर चढ़कर बोलता था। यह प्रेमचन्द की विशेषता थी कि वह शब्दों का ऐसा मायाजाल बुनते थे कि पाठक उससे निकल ही नहीं पाता था। यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं होगा कि उनके रचना को प्रभावी बनाने में विरामचिन्हों का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है? उदाहरणस्वरूप -

''क्यों ! मैं खाती-पहनती हूँ, गहने बनवाती हूँ, पुस्तकें लेती हूँ, पत्रिकाएँ मँगवाती हूँ, दूसरों ही की कमाई पर तो? इसका तो यह आशय भी हो सकता है कि मुझे तुम्हारी कमाई पर भी कोई अधिकार नहीं, मुझे खुद परिश्रम करके कमाना चाहिए।''[33]

उपर्युक्त पंक्तियों में एक विस्मयसूचक और एक प्रश्नवाचक चिह्न और पाँच अल्पविराम चिह्नों का प्रयोग करके कई पंक्तियों वाले वक्तव्य को प्रेमचंद ने एक वाक्य बना दिया है। इसी के साथ एक पंक्ति के वाक्य को अल्पविराम के प्रयोग से कई उपवाक्यों में बाँट दिया है, यथा -

"वह ऐसे घोड़े पर सवार थी, जिसे नित्य फेरना लाज़िमी था, दस-पाँच दिन बँधा रहा, तो फिर पुट्ठे पर हाथ ही न रखने देगा।" [34]

उपर्युक्त दोनों ही उदाहरणों के संबंध में जो बात महत्त्वपूर्ण है, वह है, दोनों में अल्पविराम चिह्नों के प्रयोग के द्वारा एक बहुत लम्बे वाक्य तथा एक दो पंक्तियों वाले वाक्य को, कई खण्डों में बाँटकर वाक्य की दुरूहता को ख़त्म कर दिया गया है। जिस कारण पाठक बिना बोझिल हुए पाठ को सहजता से ग्रहण करता है।

उपर्युक्त पंक्ति को इस प्रकार से भी लिखा जा सकता था, जैसे- वह एक ऐसे घोड़े पर सवार थी जिसको नित्य फेरना लाज़िमी था क्योंकि दस-पाँच दिन बँधा रहने पर पुट्ठे पर हाथ ही न रखने देगा।

अर्थगत दृष्टि से विचार करने पर उपर्युक्त दोनों में कोई विशेष अन्तर नहीं, परन्तु शिल्पगत दृष्टि से एवं लेखन शैली की दृष्टि से दोनों में बहुत भिन्नता है। इस प्रकार ऐसा नहीं है कि अल्पविरामों या अर्द्धविरामों के बिना 'कर्मभूमि' में कुछ लिखना असंभव था, लेकिन प्रेमचन्द के लेखन की विशेषताओं में से एक विशेषता यह भी है कि वे विरामचिह्नों के बिना लम्बे वाक्य नहीं लिखते, क्योंकि लम्बे वाक्य पाठक का ध्यान भंग करते हैं। वे अल्पविराम चिह्नों के प्रयोग से छोटे-छोटे सुस्पष्ट वाक्य के निर्माण में विश्वास रखते थे। इस प्रकार अल्पविराम चिह्नों का प्रयोग हिन्दी भाषा की ही विशेषता नहीं है, अपितु प्रेमचन्द की शैली की भी विशेषता है। इस प्रकार अनुवाद के समतुल्यता के सिद्धांत से रीतारानी पालीवाल और ललित श्रीवास्तव द्वारा अपनी-अपनी अनूदित कृतियों में इसका प्रयोग आवश्यक हो जाता है।

'कर्मभूमि' के दोनों अनुवादों को इस कसौटी पर रखने पर यह ज्ञात होता है कि मूल पाठ में प्रयुक्त अल्पविरामों एंव अर्द्धविरामों से पाठक को होने वाली सहजता को, अनुवादकद्वय ने अपनी

अनूदित कृतियों में बनाये रखा है। जिसके कारण अनूदित कृतियों में वही सहजता आ पाई है जो मूल में है। उदाहरणस्वरूप निम्नलिखित पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं -

मूल पाठ -

"महाजन का बेटा महाजन, पण्डित का पण्डित, वकील का वकील, किसान का किसान होता है; मगर यहाँ इस द्वेष ने महाजन के पुत्र को महाजन का शत्रु बना दिया।"[35]

रीतारानी पालीवाल -

" A moneylender's son becomes a moneylender, a pandit's son a pandit, and a farmer's son a former; but here the dislike for father made the moneylender's son an enemy of a moneylender."[36]

ललित श्रीवास्तव -

"A moneylender's son is a moneylenders, a scholar's son a scholar, a lawyer's son a lawyer, a farmer's son a farmer; but, in this case, revulsion caused the son of a moneylender to become his adversary." [37]

स्पष्ट है कि प्रेमचन्द ने जिस वाक्य को लिखने में तीन अल्पविराम और एक अर्द्धविराम का प्रयोग किया है, उसी को पालीवाल ने एक उपवाक्य के लोप के साथ दो अल्पविराम और एक अर्द्धविराम के प्रयोग से वाक्य की जटिलता एवं संश्लिष्टता को सहज बना दिया है। दोनों अनुवादकों ने प्रेमचन्द की शैली का पूर्ण ध्यान रखा है परन्तु कहीं-कहीं थोड़ा फेरबदल भी कर दिया हैं। जैसे श्रीवास्तव ने उपर्युक्त पंक्तियों के अनुवाद में मूलपाठ के तीन अल्पविरामों और एक अर्द्धविराम का यथावत् प्रयोग करते हुए अपनी सुविधानुसार एक अल्पविराम और जोड़ दिया है, जो अनुवादक की सृजनशीलता को इंगित करता है। मूल पाठ के भावों की रक्षा करना अनुवादक का परम कर्तव्य है, फिर भी गद्य के अनुवाद में अनुवादक की सृजन क्षमता के लिए कुछ मार्ग अवश्य ही खुले होते हैं।

अधिकतर अनुवादकद्वय ने विरामचिह्नों का वैसा ही प्रयोग किया है जैसे प्रेमचन्द ने। अर्द्धविरामों के संबंध में, एक उदाहरण विशेष रूप से देखने योग्य है-

मूल पाठ -

"देर में आइये तो जुर्माना; न आइये तो जुर्माना; सबक़ न याद हो तो जुर्माना; किताबें न ख़रीद सकिए तो जुर्माना; कोई अपराध हो जाए तो जुर्माना;" [38]

रीतारानी पालीवाल -

इन्होंने उपर्युक्त पंक्तियों का लोप कर दिया है।

ललित श्रीवास्तव -

"There is a fine if you are late; a fine if you don't show up in the classroom; a fine if you have not learned the lesson; a fine if you cannot buy books; a fine if there is any offence."[39]

अर्द्धविरामों का प्रयोग वहाँ किया जाता है जहाँ मुख्य और उपवाक्यों के बीच पूर्णविराम से कुछ कम और अल्पविराम से कुछ अधिक रुकने की आवश्यकता हो, जैसे- कठिन परिश्रम करो; सफलता अवश्यक मिलेगी। जबकि, जहाँ हम क्षण भर के लिए रुकते हैं वहाँ हम अल्पविराम का प्रयोग करते हैं। अल्पविराम का शाब्दिक अर्थ होता है थोड़ी देर के लिए रुकना या ठहरना।

मूल कृति के उपर्युक्त गद्यांश में पाँच अर्द्धविरामों के प्रयोग के द्वारा अलग-अलग बातों को एक वाक्य में परिवर्तित कर दिया गया है जैसे-अलग-अलग मोतियों को एक माला (बड़े वाक्य) में पिरो देना। इससे कई छोटे-छोटे वाक्यों के निर्माण से बचा जा सकता है और पाठ के संप्रेषण की क्षमता बढ़ जाती है।

मूल कृति की उपर्युक्त अनूदित पंक्तियों को संप्रेषणीय बनाने के लिए, ललित श्रीवास्तव ने प्रेमचन्द की शैली का अनुसरण करते हुए चार अर्द्धविराम चिह्नों का प्रयोग करके, मूल कृति की न केवल शैली बल्कि प्रभाव को यथावत् बनाये रखने का सफल प्रयत्न किया है।

दोनों अनूदित कृतियों के कई उदाहरण ऐसे भी हैं जहाँ विरामचिह्न संबंधी कमियाँ हैं। कहीं-कहीं मूल पाठ में विरामचिह्नों के न होने पर भी अनुवादक द्वारा उसका प्रयोग किया गया है। फलस्वरूप शिल्प एवं शैली की दृष्टि से दोनों अनूदित कृतियाँ प्रेमचन्द की परम्परा का सही प्रतिनिधित्व नहीं कर सकी हैं। उदाहरणस्वरूप -

मूल पाठ -

"ब्रह्मचारीजी कई पुजारियों और पंडों के साथ लाठियाँ लिए द्वार पर खड़े थे।" [40]

उपर्युक्त पंक्तियों में प्रेमचन्द ने एक पूर्णविराम चिह्न के अतिरिक्त अन्य कोई भी विरामचिह्न नहीं प्रयोग किया है। संभवत: उनका मक़सद उत्तेजना के उस चरम स्तर को बनाये रखना था, जो डॉ. शांतिकुमार और अवर्ण जातियों के मन्दिर में प्रवेश के विरोध में ब्रह्मचारी तथा पंडों द्वारा लाठी-डंडे लेकर खड़े होने से निर्मित हुआ था। किंतु रीतारानी पालीवाल ने इसी वाक्य का निम्नलिखित अनुवाद प्रस्तुत किया है -

" Brahmachari, with many priests and pandas, was standing at the gate. All of them had lathis in their hands." [41]

कहने की आवश्यकता नहीं कि पालीवाल ने उन्हीं पंक्तियों को, जिन्हें प्रेमचन्द ने बिना विरामचिह्नों का प्रयोग किए हुए लिखा, को दो अल्पविराम तथा बीच में एक पूर्णविराम के प्रयोग से एक पंक्ति के वाक्य को डेढ़ पंक्ति में बदल दिया है। अल्पविराम के प्रयोग से सारा ज़ोर *Brahmachari* पर आ गया है, जबकि मूल में, ब्रह्मचारी, पुजारियों और पंडों पर समान रूप से बल दिया गया है तथा कथा के प्रवाह पर विशेष ध्यान दिया गया है, जबकि पालीवाल के अनुवाद में *Brahmachari* को प्रमुख व्यक्ति तथा पुजारियों और पंडों को गौण व्यक्ति के रूप में चित्रित करने का प्रयास किया गया है। इसके साथ ही *All of them had lathis in their hands* को पूर्णविराम के द्वारा पृथक् वाक्य बना देने से मूल कृति में विद्यमान लय को भंग कर दिया है। इन्हीं पंक्तियों का अनुवाद ललित श्रीवास्तव ने कुछ इस प्रकार किया है-

"Brahmachariji and several priests and acolytes were standing at the door holding lathis." [42]

उपर्युक्त अनुवाद कर्म में श्रीवास्तव ने मूल कृति की व्याकरणिक संरचना में बिना अल्पविराम के प्रयोग के बोधगम्य अनुवाद करने का सफल प्रयास किया है।

विरामचिह्नों की कसौटी पर रखकर देखने से यह स्पष्ट होता है कि अधिकतर अनुवादक इसमें सफल रहे हैं, जबकि कहीं-कहीं अनुवाद में कुछ कमियाँ शेष रह गयी हैं। यदि उपर्युक्त पंक्ति का अनुवाद इस प्रकार किया जाता तो अच्छा होता -

Brahmachariji and several priests and pandas were standing at the gate holding lathis in their hands.

उपरोक्त के अतिरिक्त, वाक्य में विस्मयादिबोधक संबंधी कुछ विसंगतियाँ भी हो सकती हैं। अनुवाद प्रक्रिया में अनुवादक या तो इन शब्दों के समतुल्य शब्दों द्वारा इनका अनुवाद करता है या फिर इन्हें छोड़ देता है या फिर इनका शब्दशः अनुवाद करता है।

उपन्यास की कथा में कई चरण होते हैं। इन चरणों से गुजरता हुआ उपन्यास पाठक को रोमांच, हर्ष, आश्चर्य, शोक, घृणा, क्रोध, व्यथा इत्यादि भावों से परिचित कराता है। 'कर्मभूमि' में इन सभी भावों को प्रेमचन्द ने अपनी लेखन क्षमता से विस्तार प्रदान किया है, उदाहरणस्वरूप-

'अच्छा! दादा ही ने गोली चलवायी है?' [43]

उपर्युक्त पंक्ति में प्रेमचन्द ने आश्चर्यमिश्रित वाक्य की संरचना करके कौतूहल को बढ़ा दिया है जबकि अंग्रेज़ी भाषा में इसका अनुवाद रीतारानी पालीवाल ने कुछ इस प्रकार से किया है-

''Is it so ! He has got the shooting done ?'' [44]

इसी को ललित श्रीवास्तव ने कुछ इस प्रकार अनूदित किया है-

''Achcha! Dada is behind the firing ?'' [45]

उपर्युक्त अनुवाद कर्म में पालीवाल ने जहाँ भावानुवाद का आश्रय लिया है वहीं श्रीवास्तव ने लिप्यंतरण के द्वारा शब्दशः *Achcha* लिख दिया, जो हिन्दी भाषा-भाषी पाठकों के लिए तो सुबोधगम्य है परन्तु विषम भाषा-भाषी पाठकों को इसका शाब्दिक अर्थ समझना मुश्किल होगा। जबकि रीतारानी पालीवाल ने इसका भावानुवाद करके पाठक को आश्चर्य भाव का बोध कराया है। इसी सन्दर्भ में एक अन्य उदाहरण दृष्टव्य है-

मूल पाठ -

"सुखदा ने चकित होकर कहा- 'अरे! सच कहो।' " [46]

रीतारानी पालीवाल -

"Sukhada asked in surprise – 'O! Tell me the fruth.' " [47]

ललित श्रीवास्तव -

"Sukhada said, very surprised, 'Really, is that true?' " [48]

अनुवादकद्वय ने अपनी-अपनी अनुवाद शैली में अनुवाद कार्य किया है। पालीवाल ने 'अरे' के लिए *O* का प्रयोग करके भावों को अक्षुण्ण रखने का सफल प्रयास किया है, जबकि श्रीवास्तव ने विस्मयादिबोधक वाक्य को प्रश्चवाचक वाक्य में बदल कर नवीन प्रयोग किया है।

'कर्मभूमि' के दोनों अनुवादों के तुलनात्मक अध्ययन के दौरान इनकी तुलना का एक अहम बिन्दु, मूल कृति में आये कई गीत हैं। प्रेमचन्द ने गीतों के माध्यम से वातावरण को संगीतमय बना दिया है। यद्यपि प्रेमचन्द उपन्यास में गीतों का ज़्यादा प्रयोग नहीं करते हैं, परन्तु फिर भी जितने भी हैं वे प्रेमचन्द की रचनाशीलता को प्रदर्शित करते हैं।

काव्य के अनुवाद में अनुवादकों को कई कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है, क्योंकि "कविता एक संश्लिष्ट रचना होती है। वह रचना अपने भाव, रंग और अभिव्यक्ति आदि की विशिष्टता से मुक्त नहीं होती और किसी भी सार्थक रचना में अभिव्यक्ति का रूप अपने कथ्य के वैशिष्ट्य से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। " [49] 'कर्मभूमि' के विषय में भी यह बात सत्य प्रतीत होती है। यद्यपि 'कर्मभूमि' में ग़ज़लों की संख्या बहुत ज़्यादा नहीं है, परन्तु तुलनात्मक अध्ययन की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। रीतारानी पालीवाल ने गीत वाले अंशों का अनुवाद नहीं किया है जबकि ललित श्रीवास्तव ने इनका अनुवाद किया है। उदाहरणस्वरूप-

मूल पाठ -

"आपको मेरी वफ़ा याद आयी,

ख़ैर है आज यह क्या याद आयी।" [50]

ललित श्रीवास्तव -

"That you remembered my devotion,

It is good, today at least you remembered." [51]

ग़ज़ल की पहली पंक्तियों में 'वफ़ा' के लिए अनुवादक ने *devotion* शब्द का प्रयोग किया है जिसका अर्थ- 'भक्ति' 'श्रद्धा' 'समर्पण' होता है। जबकि वफ़ा का प्रयोग यहाँ इस अर्थ में तो कदापि नहीं किया गया है। *devotion* से किसी के प्रति श्रद्धा और भक्ति का बोध होता है जबकि वफ़ा का मतलब इन पंक्तियों में ईमानदारी ध्वनित हो रहा है।

इस सन्दर्भ में 'कर्मभूमि' की एक अन्य पंक्ति उदाहरणस्वरूप दृष्टव्य है-

मूल पाठ -

"कुछ मेरी नज़र ने उठके कहा कुछ उसकी नज़र ने झुक के कहा,

झगड़ा जो न बरसों में चुकता, तय हो गया बातों-बातों में।" [52]

ललित श्रीवास्तव -

"Something was said by the lifting of my eyes,

something was said by the lowering of his,

The quarrel that wouldn't have been settled in years,

was settled in a trice." [53]

मूल पाठ की उपर्युक्त पंक्तियों का अनुवाद पालीवाल ने नहीं किया, जबकि ललित श्रीवास्तव ने शब्दानुवाद के द्वारा इन पंक्तियों में निहित भावों को संप्रेषित करने का प्रयत्न किया है। इन्होंने प्रथम पंक्तियों में 'कुछ' की तुकबंदी को *something* के प्रयोग से बनाए रखा और अंत में *trice* का प्रयोग करके अनूदित पंक्तियों को मूल के समान सम्प्रेषणीय बनाकर अपनी सर्जनात्मकता का भी परिचय दिया है।

संदर्भ सूची –

1. *अनुवाद विज्ञान : सिद्धांत एवं अनुप्रयोग,* (सं.) डॉ. नगेन्द्र, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, पृ. 48
2. देखें, *Karmabhumi*, Translated by Lalit Srivastava, Oxford India,First published 2006,Second impression 2009
3. *कर्मभूमि*, प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण : 2008, आवृत्ति : 2010, पृ.5
4. *Karmabhoomi*, Translated by Dr. Ritarani Paliwal, Frank Bros. & Co. 2004, पृ.1
5. *Karmabhumi*, Translated by Lalit Srivastava, पृ. 1
6. *Karmabhoomi*, Translated by Dr. Ritarani Paliwal, पृ.22
7. *कर्मभूमि*, प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 58
8. *Karmabhoomi*, Translated by Dr. Ritarani Paliwal, पृ. 47
9. *Karmabhumi,* Translated by Lalit Srivastava, पृ. 70
10. *कर्मभूमि* : प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 9
11. *Karmabhoomi*, Translated by Dr. Ritarani Paliwal, पृ. 8
12. *Karmabhumi*, Translated by Lalit Srivastava, पृ. 7
13. *कर्मभूमि*, प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 9
14. *Karmabhoomi*, Translated by Dr. Ritarani Paliwal, पृ. 7
15. *Karmabhumi*, Translated by Lalit Srivastava, पृ. 6
16. *Bhargava's Dictionary,Hindi-English*, Compiled & Edited by Prof. R.C. Pathak, B.A. L. T., Reprint 2008, पृ. 481

17 *कर्मभूमि*, प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.11

18. *Karmabhoomi*, Translated by Dr. Ritarani Paliwal, पृ. 12

19. *कर्मभूमि*, प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, पृ.12

20. *कर्मभूमि*, प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, पृ. 46

21. *Karmabhumi*, Translated by Lalit Srivastava, पृ. 54

22. *कर्मभूमि*, प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, पृ. 105

23. *Karmabhumi*, Translated by Lalit Srivastava, पृ. 127

24. *कर्मभूमि*, प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, पृ. 108

25. *Karmabhumi*, Translated by Lalit Srivastava, पृ. 131

26. *कर्मभूमि*, प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, पृ. 8

27. *Karmabhoomi*, Translated by Dr. Ritarani Paliwal, पृ . 5

28. *Karmabhumi*, Translated by Lalit Srivastava, पृ. 5

29. *कर्मभूमि*, प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, पृ.55

30. *कर्मभूमि*, प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, पृ. 98

31. *Karmabhoomi*, Translated by Dr. Ritarani Paliwal, पृ. 86

32. *Karmabhumi*, Translated by Lalit Srivastava , पृ. 119

33. *कर्मभूमि*, प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, पृ. 16

34. *कर्मभूमि*, प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, पृ. 17

35. *कर्मभूमि*, प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, पृ. 8

36. *Karmabhoomi*, Translated by Dr. Ritarani Paliwal, पृ. 6

37. *Karmabhumi*, Translated by Lalit Srivastava, पृ. 6

38. *कर्मभूमि*, प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, पृ. 5

39. *Karmabhumi*, Translated by Lalit Srivastava, पृ. 1

40. *कर्मभूमि*, प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, पृ. 144

41. *Karmabhoomi*, Translated by Dr. Ritarani Paliwal, पृ. 114

42. *Karmabhumi*, Translated by Lalit Srivastava, पृ. 178

43. *कर्मभूमि*, प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, पृ. 147

44. *Karmabhoomi*, Translated by Dr. Ritarani Paliwal, पृ. 118

45. *Karmabhumi*, Translated by Lalit Srivastava, पृ. 183

46. *कर्मभूमि*, प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, पृ. 178

47. *Karmabhoomi*, Translated by Dr. Ritarani Paliwal, पृ. 147

48. *Karmabhumi*, Translated by Lalit Srivastava, पृ. 221

49. Edited by Ravinder Gargesh & Krishna Kumar Goswami, *Translation & Interpreting,* Orient Longman, New Delhi, 2007, पृ. 148

50. *कर्मभूमि*, प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, पृ. 7

51. *Karmabhumi*, Translated by Lalit Srivastava, पृ. 3

52. *कर्मभूमि*, प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, पृ. 69

53. *Karmabhumi*, Translated by Lalit Srivastava, पृ. 83

'कर्मभूमि' के अंग्रेज़ी अनुवादों का सांस्कृतिक विश्लेषण के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन

प्रेमचन्द और उनकी कृति 'कर्मभूमि' भारतीय मिट्टी की सांस्कृतिक उपज है। सांस्कृतिक तत्त्वों की दृष्टि से अगर देखा जाए तो सर्वाधिक सांस्कृतिक तत्त्व प्रेमचन्द की रचनाओं में ही मिलते हैं। इसलिए इनकी रचनाओं का लक्ष्य भाषा में अनुवाद के लिए स्रोत भाषा की संस्कृति की गहरी समझ अपेक्षित है। इनकी कृतियों के अनुवाद की सफलता-असफलता इन सांस्कृतिक तत्त्वों के सफल अनुवाद पर ही निर्भर होती है। इसके अन्तर्गत प्रमुख रूप से शब्द, लोकोक्तियाँ तथा मुहावरे आते हैं।

संसार की प्रत्येक भाषा की ध्वनियों, संकेतों, अर्थों का आधार, स्थान विशेष की संस्कृति होती है। ''भाषा और संस्कृति अथवा संस्कृति और भाषा एक दूसरे के पूरक हैं या अनुपूरक। जहाँ भाषा हमारे भावों को अभिव्यक्तिक चेतना प्रदान करती है, वहीं संस्कृति मानवीय गरिमा और सांस्कृतिक सौष्ठव की संवाहिका है।''[1] भाषा मानव के विकास की द्योतक है। मानव के विकास के साथ-साथ भाषा भी विकसित और शक्तिशाली होती गई। इस विकासक्रम की प्रक्रिया में जहाँ भाषा मानव की अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में विकसित हुई वहीं संस्कृति मानव के जीवनयापन, रहन-सहन, व्यवहार, धार्मिक विश्वासों के रूप में पल्लवित हुई।

सांस्कृतिक आधार पर 'कर्मभूमि' की अंग्रेज़ी में अनूदित दोनों कृतियों का तुलनात्मक अध्ययन प्रारम्भ करने से पूर्व इस पद को समझना भी आवश्यक है कि संस्कृति क्या है? ''संस्कृत भाषा के 'सम्' उपसर्ग के साथ 'कृ' धातु में क्तिन् प्रत्यय के योग से निर्मित शब्द 'संस्कृति' मूलतः एक आत्मगत तत्त्व है। इसका शाब्दिक अर्थ है-परिष्कार, पवित्रीकरण अथवा सभ्यता का वह स्वरूप जो आध्यात्मिक व मानसिक विशिष्टता का द्योतक होता है।'' [2] सामान्य अर्थों में अगर इस शब्द का विश्लेषण किया जाए तो, संस्कृति मानव के धार्मिक पक्ष से संबंधित है। परन्तु इसी को अगर एक अन्य नज़रिए से देखा जाय तो ''संस्कृति मनुष्य का वो तमाम सचेतन और सामूहिक क्रियाकलाप है जो उसे प्रकृति की अचेतन व्यवस्था के ऊपर सोदेश्य नियंत्रण कायम करने की क्षमता प्रदान करता हैं।'' [3]

संस्कृति को अंग्रेज़ी में 'कल्चर' *(Culture)* कहा जाता है। परन्तु ''अंग्रेज़ी शब्द 'कल्चर' और संस्कृत शब्द संस्कृति में गुणात्मक अन्तर है - इस सन्दर्भ में 'कल्चर' का संबंध अभिजात संस्कृति से है।'' [4] क्योंकि 'कल्चर' के संबंध में सामान्य धारणा यह है कि इसका वाहक और पोषक

अभिजात वर्ग है, जबकि संस्कृत भाषा का शब्द 'संस्कृति' एक वृहत धारणा है, जिसमें मनुष्य के गर्भाधान संस्कार से लेकर मृत्यु तक, मानव द्वारा संपादित वे समस्त कार्य-व्यापार आते हैं जो मानव जाति को समृद्ध और चिरकालिक बनाते हैं। इसके अतिरिक्त संस्कृति एक ऐसा गुण है जिसने मानव के जीवन को आच्छादित किया हुआ है। मानव के स्वभाव में संस्कृति फूलों की सुगन्ध की तरह व्याप्त है। संस्कृति एक सतत प्रक्रिया के द्वारा निर्मित होती है। आज हमारे सामने संस्कृति का जो रूप है, वह एक दो दिन में निर्मित नहीं हुआ है, बल्कि कई वर्षों का परिणाम है। मानव सभ्यता के उद्‌भव और विकास के साथ-साथ संस्कृति का भी उद्‌भव और विकास संबंधित है यद्यपि "संस्कृति एवं सभ्यता में घनिष्ठ संबंध है तथापि ये समानधर्मी शब्द नहीं हैं। सभ्यता संस्कृति का वाह्य आवरण है, संस्कृति की मूल अवधारणा की भौतिक अनुकृति है।" [5]

भारतीय सभ्यता जटिलतम सभ्यताओं में से एक है। इसे समझने से पहले भारतीय भाषा परंपरा को समझना होगा, क्योंकि भाषा और संस्कृति का संबंध बहुत गहरा और प्राचीन है। जहाँ भाषा के विकास में संस्कृति का महत्त्वपूर्ण योगदान है। वहीं भाषा संस्कृति के विकास को रेखांकित करती है। इस दृष्टि से अगर देखा जाए तो भाषा के माध्यम से किसी स्थान विशेष की सांस्कृतिक महक को, अन्य व्यक्ति जो कि उस स्थान से संबंधित नहीं हैं, भी महसूस करते हैं। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि 'संस्कृति' स्वयं में इतनी अधिक विस्तृत अवधारणा है जिसे यहाँ स्पष्ट कर पाना संभव नहीं है और न ही आवश्यक। अनुवाद यद्यपि समाज और संस्कृति से संबंधित है। परन्तु इसका मुख्य संबंध भाषा से है। अतः इस संदर्भ में भाषा और संस्कृति के बीच के संबंधों पर विचार करना ही आवश्यक होगा।

इस प्रकार भाषा, संस्कृति को अभिव्यक्ति प्रदान करती है और संस्कृति, भाषा को समृद्ध और समुन्नत करती है, अतः भाषा और संस्कृति एक दूसरे के पूरक हैं। संस्कृति, भाषा से अभिन्न रूप से संबंधित है, इसे भाषा से अलग नहीं किया जा सकता है। 'कर्मभूमि' को इसी सन्दर्भ में देखे जाने की आवश्यकता है, क्योंकि उपन्यास का कथा फलक बहुत विस्तृत होता है। ऐसे में इस बात की संभावना ज़्यादा रहती है कि इसमें सांस्कृतिक तत्त्वों को विशेष रूप से अभिव्यक्ति प्रदान की गई हो। क्योंकि 'प्रेमचन्द' जैसा सामाजिक-सांस्कृतिक रचनाकार अपने समाज एवं संस्कृति से कटकर नहीं लिख सकता है। इस दृष्टि से अगर देखा जाए तो प्रेमचन्द कृत 'कर्मभूमि' एक समृद्ध रचना है।

'कर्मभूमि', प्रेमचन्द की अन्य कृतियों की ही तरह सांस्कृतिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण रचना है। समस्या यहीं प्रारम्भ होती है, क्योंकि जो कृति सांस्कृतिक सन्दर्भ से जितनी ज़्यादा समृद्ध होगी उसके अनुवाद में अनुवादक को उतनी ही ज़्यादा परेशानी का सामना करना पड़ेगा। 'कर्मभूमि' सामाजिक-सांस्कृतिक उद्धरणों, लोकोक्तियों, मुहावरों, शब्दों से भरी पड़ी है। इसमें हिन्दू-मुस्लिम संबंधी धार्मिक मान्यताएँ, उनके रीति-रिवाज, खान-पान, रहन-सहन का पूरा ब्यौरा विद्यमान है। इन सब के कारण यह कृति सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण और विशिष्ट हो जाती है; परन्तु यही विशिष्टता जहाँ एक ओर इस कृति के प्रति हमारा दृष्टिकोण विशिष्ट बनाती है, वहीं दूसरी और यह अनुवाद कार्य को दुष्कर बना देती है।

इस कृति की इन्हीं विशेषताओं के कारण और तुलनात्मक अध्ययन को सरल और सुबोधगम्य बनाने हेतु इस पुस्तक में आए हुए अधिकांश सांस्कृतिक सन्दर्भों को विभिन्न शीर्षकों यथा - महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक पद, लोकोक्ति, मुहावरों में विभाजित किया जा सकता है। सांस्कृतिक शब्दों की दृष्टि से दोनों अनूदित कृतियों की मूलपाठ से तुलना करने से पूर्व मैं यहाँ स्पष्ट करना चाहूँगी कि अध्याय तीन में परम्परागत शब्दों का विधिवत वर्गीकरण करना और उनकी व्याख्या का एक भिन्न उद्देश्य है। जबकि यहाँ तुलनात्मक अध्ययन के लिए चयनित शब्दों का उद्देश्य भिन्न है। अध्याय तीन में परंपरागत शब्दों को विभिन्न श्रेणियों में, यथा - धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक में बाँटा गया है, जबकि यहाँ सामाजिक-सांस्कृतिक शब्दों का एक सीमित सन्दर्भ में उल्लेख किया गया है।

धर्म, रहन-सहन, खान-पान, रीति-रिवाज संबंधी बहुत सारे शब्दों का प्रयोग 'कर्मभूमि' में हुआ है। उपन्यास के दूसरे भाग के प्रथम परिच्छेद में प्रयुक्त कुछ शब्द सांस्कृतिक दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। उदाहरणार्थ -

मूल पाठ -

''इस गाँव में मुश्किल से बीस-पचीस झोंपड़े होंगे। पत्थर के रोड़ों के तले-ऊपर रखकर दीवारें बना ली गयी हैं। उन पर छप्पर डाल दिया गया है। द्वारों पर बनकट की टट्टियाँ हैं। इन्हीं काबुकों में इस गाँव की जनता अपने गाय-बैलों, भेड़-बकरियों को लिए अनन्त से विश्राम करती चली आती है।

एक दिन संध्या समय एक साँवला-सा, दुबला-पतला युवक मोटा कुरता, ऊँची धोती और *चमरौधे जूते* पहने, कन्धे पर लुटिया-डोर रखे, बग़ल में एक *पोटली* दबाये इस गाँव में आया और एक बुढ़िया से पूछा - 'क्यों माता, यहाँ परदेशी को रात भर रहने का ठिकाना मिल जायेगा?' '' [6]

उपर्युक्त गद्यांश में कुछ शब्द जैसे बनकट की टट्टियाँ, चमरौधे जूते, पोटली इत्यादि शब्दों का अनुवाद, अनुवादकद्वय ने निम्न प्रकार किया है-

रीतारानी पालीवाल -

"The village consists of hardly twenty to twenty-five huts, made by placing small and big stones together and with a thatched roof on them.

One evening a slightly dark complexioned, lean and thin youth dressed in a thick kurta, dhoti and chamaraudha shoes, came to the village. He asked an old woman – 'Mother! Can a stranger find a little place to stay for a night here.?' " [7]

ललित श्रीवास्तव-

"The village has no more than twenty to twenty-five huts, constructed of small stones placed one above the other, covered by thatched roofs. The doorways are made of wood and thatch. From time immemorial, people in the village have been living is such pigeonholes with their cows and bullocks, sheep and goats.

One evening, a thin young man of darkish complexion arrived in this village. He was wearing a kurta of coarse fabric, a dhoti to the knees, and cheap shoes. He carried on his shoulder a small metal pail and rope for hauling water from well, and held a small bundle under his arm. He asked an old woman, 'Mother, would it be possible for a stranger to find accommodation for the night here?" [8]

उपर्युक्त दोनों अनूदित गद्यांशों में, मूल कृति की पंक्तियों में आये कुछ शब्दों के अनुवाद में अनुवादिका रीतारानी पालीवाल और अनुवादक ललित श्रीवास्तव ने अनुवाद संबंधी अपने दृष्टिकोण का परिचय दिया है। 'बनकट की टट्टियाँ' का अनुवाद श्रीवास्तव ने व्याख्यात्मक शैली में करते हुए *The doorways are made of wood and thatch* किया जो विषम सांस्कृतिक व्यक्ति को 'स्ट्रक्चर' तो ज़रूर बताता है, किन्तु संस्कृति से परिचय नहीं कराता है। 'बनकट' के लिए श्रीवास्तव ने *wood* और 'टट्टियाँ' के लिए *'thatch'* अनुवाद किया है। *wood* शब्द से सामान्य रूप 'लकड़ी' ध्वनित होता है जबकि 'बनकट' अपने आप ही उगनेवाली एक वनस्पति है, जो गाँव-देहातों में बहुत उपयोगी होती है। चूँकि इस प्रकार के पदों का सीधा-सीधा अनुवाद संभव नहीं

है, अत: अनुवादक इस हेतु या तो लक्ष्य भाषा में स्रोत भाषा के समतुल्य शब्दों का प्रयोग करता है या फिर ऐसे शब्दों का लिप्यंतरण करता है; अगर इससे भी अनुवाद में सहायता नहीं मिलती तो वह इन शब्दों को छोड़ देता है। अगर उपर्युक्त पंक्तियों के आधार पर दोनों अनुवादकों के दृष्टिकोण का तुलनात्मक अध्ययन किया जाए तो उनमें कुछ सम और बिषम बिन्दु उभर कर सामने आते हैं, यथा- 'चमरौधे जूते' का अनुवाद पालीवाल ने *chamaraudha shoes* किया तथा श्रीवास्तव ने अपने परिवेशगत आग्रहों के कारण तथा लक्ष्य भाषा में स्रोत भाषा की समस्त सामग्री को उपलब्ध कराने की अपनी प्रतिबद्धता के कारण, इसके लिए *cheap shoes* अनुवाद किया, जो श्रीवास्तव के प्रभावधर्मी अनुवाद की शैली को दर्शाता है।

इसी प्रकार 'मोटा कुरता' और 'धोती' के लिए पालीवाल ने *thick kurta* और *dhoti* अनुवाद करने के लिए क्रमश: आंशिक लिप्यंतरण और लिप्यंतरण का सहारा लिया, जबकि श्रीवास्तव ने 'मोटा कुरता' के लिए *kurta of coarse fabric* तथा 'धोती' के लिए *dhoti* अनुवाद करते हुए धोती का लिप्यंतरण किया तथा मोटा कुरता का लिप्यंतरण के साथ व्याख्यात्मक शैली में अनुवाद प्रस्तुत किया है। परन्तु समस्या यहाँ यह है कि *chamaraudha shoes* शब्द यह तो बता देता है कि वह जूता है परन्तु *chamaraudha* शब्द विषम सांस्कृतिक व्यक्ति के लिए अबोधगम्य होगा। ऐसे ही *thick kurta* और *dhoti* भी, भारतीय संस्कृति की पहचान न रखने वालों के लिए है। पहली बात तो यह कि *कुरता* और *धोती* भारत के प्रमुख पहनावों में से एक है, कुरता शरीर के ऊपरी अंग को ढँकने के काम आता है और धोती कमर से नीचे पहनी जाती है। दूसरी बात यह कि भारत में धोती मर्द और स्त्री दोनों पहनते हैं। ग्रामीण इलाक़ों में साड़ी को महिलाएँ धोती ही बोलती हैं। अत: धोती एक ऐसा वस्त्र है जिसे पुरुष और महिलाएँ दोनों पहनते हैं। इसलिए इसके लिए *dhoti* अनुवाद करना उचित नहीं है तो ग़लत भी नहीं है। क्योंकि इस प्रकार के शब्दों का वाक्य में व्याख्यात्मक अनुवाद करने से कथा का प्रवाह बाधित होगा तथा प्रत्येक शब्द की पाद-टिप्पणी भी संभव नहीं है। श्रीवास्तव ने इस समस्या के निदान हेतु शब्दावली संग्रह में इस प्रकार के सामाजिक-सांस्कृतिक शब्दों की व्याख्या की है, जैसे -

dhoti: a long piece of cloth that is wrapped around the lower half of the body; men and woman wrap it differently. (पृ. 354)

kurta: loose shirt, worn as an upper garment (पृ. 355).

श्रीवास्तव द्वारा किया गया यह प्रयास सराहनीय है, क्योंकि इसे पढ़कर वह सब व्यक्ति भी धोती और कुरता से परिचित हो सकेंगे जो इस पहनावे से परिचित नहीं हैं। इसके साथ ही एक अन्य शब्द 'पोटली' का अनुवाद इन्होंने *small bundle* किया है जो मूल कृति के 'पोटली' का अंग्रेज़ी में समतुल्य शब्द है। 'पोटली' के लिए *bale* शब्द का प्रयोग भी किया जा सकता था। इसी प्रकार 'चमरौधे जूते' के लिए *cheap leather shoes* शब्द का प्रयोग करना ठीक होता, क्योंकि चमरौधा जूता सस्ते चमड़े से निर्मित होता है, जो कि 'चमार' जाति द्वारा जानवरों की ख़ाल से प्राप्त सस्ते प्रकार के चमड़े से बना होता है। प्राय: इसे निम्न वर्ग से संबंधित व्यक्ति ही पहनते हैं। अत: अंग्रेज़ी में अनूदित पंक्तियों में *Cheap leather shoes* का प्रयोग मूल अर्थ के सन्निकट होगा।

इसी प्रकार निम्नलिखित पंक्तियों में आये 'लँगोटी' का अनुवाद भी देखने योग्य है -

मूल पाठ -

"अगर तुम्हारे धर्म-मार्ग पर चलता, तो आज मैं भी लँगोटी लगाये घूमता होता, तुम भी यों महल में बैठकर मौज न करते होते।" [9]

रीतारानी पालीवाल -

इन्होंने इन पंक्तियों का अनुवाद नहीं किया है।

ललित श्रीवास्तव -

"If I had followed your path of dharma, I would have been dirt poor; you would not be sitting here enjoying the fruits of wealth." [10]

उपर्युक्त हिन्दी की पंक्तियों में 'लँगोटी' का जो भाव उभरकर सामने आ रहा है वह है बहुत ग़रीब। इस सन्दर्भ में अगर देखें तो *dirt poor* अनुवाद उचित प्रतीत होता है। परन्तु अगर शाब्दिक दृष्टि से देखा जाय तो *लँगोट* एक तद्भव शब्द है जिसका तत्सम रूप *लिंगपट्ट* होता है, जो कि भारत में ब्रह्मचारी पुरुषों द्वारा धारण किया जाने वाला अधोवस्त्र है। किन्तु इन पंक्तियों में लँगोट का प्रयोग शाब्दिक अर्थ में नहीं किया गया है बाल्कि यहाँ इसे ग़रीबी के अर्थ में प्रयुक्त किया गया है। सांस्कृतिक सन्दर्भ में एक अन्य उदाहरण दृष्टव्य है -

मूलपाठ -

"एक दिन संध्या समय अमरकांत दुकान पर बैठा हुआ था कि बुढ़िया, सुखदा की चिकन की साड़ी लेकर आयी और अमर से बोली - 'बेटा, अल्ला के फ़ज़ल से सकीना की शादी ठीक हो

गयी है! आठवीं को निकाह हो जाएगा। और तो मैंने सब सामान जमा कर लिया है; पर कुछ रुपयों से मदद करना।'' [11]

रीतारानी पालीवाल -

"One evening while Amar was sitting in his shop, the old woman came with Sukhada's chikan sari and said to Amar – 'Sakina's marriage has been fixed by God's grace. Nikah will be on the eighth. I have arranged for all things but please help me with some money." [12]

ललित श्रीवास्तव -

"One evening Amarkant was in the shop when the old woman came with a muslin sari of Sukhada's and said to Amar, 'Beta, Sakina's marriage has been arranged through the grace of Allah. The wedding is on the eighth day of the month. I have arranged for everything, but you could help with money." [13]

उपर्युक्त पंक्तियों में दो शब्द 'चिकन' और 'निकाह' अनुवाद की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। चिकन, फ़ारसी शब्द चिकिन से बना है जिसका शाब्दिक अर्थ है -

''एक प्रकार का कशीदा, जो रेशम या सूत से कपड़े पर काढ़ा जाता है।'' [14]

इस प्रकार चिकन का कार्य एक कला है। यह वस्त्र पर की जाने वाली काशीदाकारी का बढ़िया नमूना है। चूँकि यह संस्कृति विशेष से संबद्ध पद है। अतः इसके अनुवाद में अनुवादकजनों को कठिनाई का सामना करना पड़ता है। इसीलिए पालीवाल जी ने 'चिकन की साड़ी' का लिप्यंतरण अंग्रेज़ी में *chikan sari* किया है। जो मूल पाठ के प्रवाह को बनाए रखने में तो सक्षम है परन्तु चिकन क्या है? इसे संप्रेषित करने में अक्षम है। पालीवाल जी ने इसके लिए कोई पाद-टिप्पणी भी प्रस्तुत नहीं की है। वहीं श्रीवास्तव जी ने 'चिकन की साड़ी' का अनुवाद *Muslin sari* किया है। यहाँ *muslin* का अर्थ मलमल है, जो चिकन से सर्वथा भिन्न है। मलमल, रेशमी वस्त्र का एक प्रकार है, जबकि चिकन, कशीदाकारी का उदाहरण है। ऐसे में श्रीवास्तव द्वारा चिकन के लिए *muslin* का प्रयोग उनकी सामान्यीकरण की प्रवृत्ति को दर्शाता है। जिसके कारण अनुवाद त्रुटिपूर्ण हो गया है। इस समस्या के निदान हेतु इन्हें *चिकन* शब्द का ही प्रयोग करना चाहिए था और इसे पाठ के अन्त में टिप्पणी द्वारा समझाना चाहिए था।

जिस प्रकार चिकन की साड़ी का लिप्यंतरण *chikan sari* किया गया है उसी प्रकार रीतारानी पालीवाल द्वारा 'निकाह' का लिप्यंतरण *Nikah* किया गया है। यह अरबी पुल्लिंग शब्द निकाह का अंग्रेज़ी लिप्यंतरण मात्र है। यद्यपि इस शब्द का अर्थ - विवाह, पाणिग्रहण होता है। किंतु सांस्कृतिक दृष्टि से विवाह और निकाह एक दूसरे से भिन्न हैं। विवाह, एक सामान्य शब्द है जिससे विवाह संस्कार का बोध होता है, न कि धर्म का। जबकि 'निकाह' मुस्लिम सम्प्रदाय में विवाह को कहा जाता है। ललित श्रीवास्तव द्वारा 'निकाह' के लिए *wedding* अनुवाद, इनकी प्रभावधर्मी अनुवाद की शैली को दर्शाता है। परन्तु यहाँ यह स्पष्ट करना उचित होगा कि *wedding* से विवाह का बोध तो हो रहा है परन्तु यह ज्ञात नहीं होता है कि यह मुस्लिम वर्ग से संबंधित है। एक अन्य शब्द 'गंगा स्नान' का अनुवाद रीतारानी पालीवाल द्वारा *Ganga snan* करना उचित ही है, क्योंकि इस प्रकार के पदों का लिप्यंतरण के अतिरिक्त कोई दूसरा उपाय नहीं होता है। इसीलिए पालीवाल जी ने एक स्थान पर 'गंगा-स्नान' का लिप्यंतरण किया और एक अन्य स्थान पर निजी संस्कृति के अनुरूप लक्ष्य भाषा में इस पद का अनुवाद *dip in Ganga* किया। श्रीवास्तव जी ने इसी शब्द का अनुवाद दो स्थानों पर दो तरीके से किया है, यथा -

मूलपाठ -

1. ''साल भर में एक बार भी गंगा-स्नान करते हो?'' [15]
2. ''आप गंगा-स्नान पूजा-पाठ को मुख्य धर्म समझते हैं;'' [16]

ललित श्रीवास्तव -

1. "Do you take a dip in the Ganges even once a year?" [17]
2. "You consider bathing in the Ganges and worship and scripture reading as the essentials of dharma" [18]

प्रथम अनुवाद में श्रीवास्तव जी ने निजी संस्कृति के अनुरूप लक्ष्य भाषा में अनुवाद किया है जबकि द्वितीय अनुवाद में अंग्रेज़ी संस्कृति के अनुरूप अनुवाद हुआ है। प्रथम अनुवाद का *dip* द्वितीय अनुवाद के *bathing* की तुलना में भारतीय संस्कृति के अधिक निकट है, क्योंकि भारत में गंगा-स्नान का तात्पर्य गंगा में डुबकी लगाना ही होता है न कि स्नान करना । इस अर्थ में *dip in Ganges* भारतीय संस्कृति को अधिक व्याख्यायित कर रहा है।

ऐसे ही एक अन्य पद 'बारात' का लिप्यंतरण *baraat* करना पालीवाल द्वारा ठीक ही है, जबकि इसी पद का अनुवाद ललित श्रीवास्तव द्वारा *wedding party* करना कुछ अटपटा प्रतीत होता

है। क्योंकि बारात का संबंध वर पक्ष की शोभायात्रा से है, जबकि *wedding party* का शाब्दिक अर्थ है - विवाह दल, जो बारात के अर्थ को संप्रेषित नहीं कर पा रहा है। यदि यहाँ *wedding party* के स्थान पर *groom party* का प्रयोग किया जाय तो बारात शब्द का भाव ज़्यादा व्यंजित होगा।

भारतीय सांस्कृतिक पदों के अन्तर्गत 'कर्मभूमि' में उल्लिखित विभिन्न भोज्य पदार्थों और उनसे संबंधित पदों की एक लम्बी सूची बनायी जा सकती है। अमरकांत द्वारा महन्तजी से मिलने के प्रसंग में और धर्मशाला में भोजन करने के प्रसंग में, कई भोज्य पदार्थों का उल्लेख किया गया है। इस सन्दर्भ में 'कर्मभूमि की निम्नलिखित पंक्तियाँ उदाहरणस्वरूप विशेष रूप से दृष्टव्य हैं -

मूलपाठ -

1. ''कहीं बड़ी-बड़ी कढ़ाइयों में *पूड़ियाँ-कचौड़ियाँ* बन रही है; कहीं भाँति-भाँति की शाक-भाजी चढ़ी हुई है; कहीं दूध उबल रहा है, कहीं मलाई निकाली जा रही है। बरामदे के पीछे, कमरों में खाद्य सामग्री भरी हुई थी। ऐसा मालूम होता था, अनाज, साक-भाजी, मेवे, फल, मिठाई की मण्डियाँ हैं। एक पूरा कमरा तो केवल परवलों से भरा हुआ था।'' [19]
2. ''अमर ने भी चार आने की एक पत्तल ली। पूरियाँ, हलवे, तरह-तरह की भाजियाँ, अचार-चटनी, मुरब्बे, मलाई, दही।'' [20]

रीतारानी पालीवाल -

इन्होंने प्रथम पंक्ति का शब्द-दर-शब्द अनुवाद का प्रयास न करते हुए भावानुवाद करने का प्रयास किया है। इस कोशिश में इन्होंने महत्त्वपूर्ण पदों का लोप कर दिया है जबकि दूसरे उदाहरण का इन्होंने अनुवाद ही नहीं किया है। प्रथम उदाहरण की पंक्तियों का इन्होंने अंग्रेज़ी में अनुवाद कुछ इस प्रकार किया है -

"Various types of meals were being cooked. The rooms behind the verandas were full of stores of food grains and other necessary things. It looked as if these were wholesale markets of grains, vegetables. fruits, dry-fruits and sweets." [21]

पालीवाल द्वारा अंग्रेज़ी में अनूदित *karmabhoomi* के उपर्युक्त गद्यांश की मूल कृति से तुलना से यह स्पष्ट होता है कि इन्होंने 'पूड़ियाँ-कचौड़ियाँ', 'परवलों' का अनुवाद नहीं किया है। यद्यपि

'पूड़ियाँ-कचौड़ियाँ', 'परवल' को अनूदित न करने का कारण इन पदों की अननूद्यता है, परन्तु भारतीय संस्कृति का सजीव चित्रण प्रस्तुत करने के लिए इन शब्दों का उल्लेख वाक्य में जरूरी था।

इसी प्रकार मूलकृति से उद्धृत हिन्दी के द्वितीय उदाहरण में कुछ अन्य शब्द जैसे-'पूरियाँ', 'हलवे', 'अचार-चटनी', 'मुरब्बे', 'मलाई', 'दही', 'पत्तल' का उल्लेख प्रेमचन्द द्वारा किया गया है। परन्तु इन पदों का अनुवाद पालीवाल ने नहीं किया है, जबकि इससे भारत के खान-पान पर प्रकाश पड़ता है।

ललित श्रीवास्तव -

1. *"Puris and kachauris* were being fried in large *karahis;* different types of greens and vegetables were being prepared; milk was being boiled, and *malaai* was being taken off the boiling milk. The rooms behind the varandahs were stocked with edibles. It seemed as if they were wholesale markets for grain, greens, vegetables, nuts and fruits, and sweets. One whole room was filled with *parwals."* [22]

उपर्युक्त पंक्तियों में ललित श्रीवास्तव ने 'पूड़ियाँ-कचौड़ियाँ', 'परवल' और 'मलाई' के लिए क्रमशः *Puris and kachauris, parwal* तथा *malaai* अनुवाद किया है। श्रीवास्तव ने 'पूड़ियाँ-कचौड़िया', 'परवल' तथा 'मलाई' का अंग्रेज़ी में लिप्यंतरण करके मूल कृति की सजीवता को न केवल बनाये रखा बल्कि उपर्युक्त पंक्तियों का पूर्ण अनुवाद प्रस्तुत करके तथा इन शब्दों की व्याख्या शब्दावली संग्रह में करके विषमभाषी पाठकों को प्रेमचन्द की उपन्यास कला का रसास्वादन कराया है।

इसी सन्दर्भ में मूल कृति से लिए गये दूसरे उदाहरण का अनुवाद, ललित श्रीवास्तव द्वारा दृष्टव्य है -

2. "Amar purchased four annas' worth of food – a platter of *puris, halwa,* several types of vegetables, *pickles* and *chutney, cream,* and *curd."* [23]

इस पंक्ति में 'पूरियाँ', 'हलवे', 'आचार-चटनी', 'मुरब्बे', 'मलाई', 'दही' का अनुवाद क्रमशः *Puris, halwa, pickles, chutney, cream, curd* किया गया है। उपर्युक्त पदों में से *pickles, cream* और *curd* विषम सांस्कृतिक पृष्ठभूमि वाले व्यक्तियों के लिए बोधगम्य है, क्योंकि यह सब उनकी संस्कृति का भी हिस्सा हैं परन्तु 'पूरियाँ', 'हलवे', 'चटनी', 'मुरब्बे' तथा प्रथम उदाहरण में

उल्लिखित 'कचौड़ियाँ', 'परवल' जैसे पद न केवल अनुवाद प्रक्रिया में अनुवादक के लिए समस्या उत्पन्न करते हैं अपितु इन पदों के अननूद्य होने के कारण अगर अनुवादक इनका लिप्यंतरण कर देता है तब ये पद विषम सांस्कृतिक पाठक के सामने सांस्कृतिक विषमता का प्रश्न खड़ा कर देते हैं। ऐसी परिस्थिति में विषम भाषा-भाषी पाठक के सम्मुख दो ही विकल्प शेष बचते हैं। या तो वह पूर्ण रूप से बोधगम्य न होने के कारण अनूदित कृति को पढ़ना बन्द कर दे या फिर अपने स्तर से ऐसे शब्दों को समझने का प्रयत्न करे। परन्तु इस प्रकार का प्रयास विज्ञान और तकनीकी जैसे क्षेत्रों में तो कारगर हो सकते हैं परन्तु उपन्यास जैसी विधा, जहाँ कथानक और उसका प्रवाह तथा भाषा पाठक को स्वयं से जोड़ती है, वहाँ यह सुझाव सफल नहीं हो सकता है।

अधिकतर अनुवादक सर्वप्रथम स्वयं ही अनुवाद प्रक्रिया के दौरान इन कठिनाइयों से दो चार होता है। ''अनुवादक को पाठक के रूप में स्रोत भाषा के मूलपाठ का अर्थग्रहण करना पड़ता है। अर्थग्रहण करने के लिए उसे पाठ का विश्लेषण भी ज्ञात या अज्ञात रूप में करना पड़ता है।'' [24] अनुवादक ललित श्रीवास्तव ने ऐसे शब्दों को जो विषम सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के पाठकों के लिए अबोधगम्य हैं, शब्दावली संग्रह में व्याख्यात्मक तरीके से समझाने का प्रयत्न किया है। यथा-

"puri	:	type of bread, rolled and deep-fried in hot ghee or oil." [25]
"kachauri	:	type of puri with some filling and deep fried." [26]
"malaai	:	rich cream." [27]
"halwa	:	A sweet dish." [28]

halwa के लिए निम्न व्याख्या भी की जा सकती थी, जो पाठक तक ज़्यादा संप्रेषित होती यथा - A sweet dish made up of coarse ground flour in ghee.

सांस्कृतिक शब्दों के आधार पर निम्नलिखित वाक्य को भी देखा जा सकता है -

मूलपाठ -

''चालीस वर्षों में ऐसा शायद ही कोई दिन हुआ हो कि उन्होंने संध्या समय की आरती न ली हो और तुलसी-दल माथे पर न चढ़ाया हो। एकादशी को बराबर निर्जल व्रत रखते थे।'' [29]

यहाँ 'आरती', 'तुलसी-दल', 'एकादशी', शब्द सांस्कृतिक दृष्टि से विशिष्ट हैं, जिसका अनुवाद पालीवाल द्वारा नहीं किया गया है तथा श्रीवास्तव द्वारा किया गया अनुवाद इस प्रकार है-

"In forty years, perhaps there hadn't been a single evening when he had not performed *aarati* or put *tulsi-dal* on his forehead. On *Ekadashi* he would fast without even water." [30]

इस वाक्य के संस्कृतिनिष्ठ अनुवाद में, अनुवादक ललित श्रीवास्तव को वह सफलता नहीं मिली जो मिलनी चाहिए थी। इसका कारण है इस प्रकार के शब्दों की अननूद्यता।

'आरती' शब्द ईश उपासना की प्रक्रिया में किया जाने वाला एक धर्मानुष्ठान है, जिसमें रूई की बत्ती बनाकर तथा देशी घी में जलाकर या फिर कपूर को जलाकर अपने इष्टदेव के सम्मुख घुमाया जाता है। साथ ही मूल कृति की हिन्दी पंक्तियों में आरती लेना ध्वनित हो रहा है। जबकि अंग्रेज़ी की अनूदित पंक्तियों में *performed aarti* से आरती करना ध्वनित हो रहा है। अनूदित कृति, मूल कृति की इस ध्वनि से अछूता रह गया है, क्योंकि आरती लेना का अर्थ है कि कोई अन्य व्यक्ति या पुजारी द्वारा ईश्वर की आरती करना, तत्पश्चात् अन्य लोगों द्वारा आरती को श्रद्धानमन करना। इसी प्रकार 'एकादशी' का हिन्दू धार्मिक संस्कृति में बहुत महत्त्व है। मान्यतानुसार एकादशी व्रत विष्णु भगवान को प्रसन्न करने के लिए रखा जाता है, परन्तु इससे समस्त देवतागण भी प्रसन्न होते हैं। एकादशी माह में दो बार पड़ती है और प्रत्येक एकादशी अपने फलानुसार, अलग-अलग नाम की होती है जैसे - पुत्रदा, सफला, निर्जला इत्यादि। इनमें से निर्जला एकादशी जेठ माह में होने वाली सबसे महत्त्वपूर्ण *एकादशी* है। इस समय प्रभु विष्णु योगनिद्रा में नहीं होते हैं। अनुवादक ललित श्रीवास्तव ने उपर्युक्त अंग्रेज़ी की पंक्तियों में 'एकादशी' का लिप्यंतरण *Ekadashi* किया है तथा शब्द संग्रह में *"eleventh day of lunar fortnight"* [31] के द्वारा व्याख्यायित करने का प्रयास किया है। परन्तु यह व्याख्या एकादशी को स्पष्ट करने में पूर्ण रूप से सक्षम नहीं है। यदि अनुवादकों ने इसकी व्याख्या इस प्रकार की होती तो ज़्यादा ठीक होता, यथा-

The eleventh day in the fortnight of a lunar month which is important for Hindu because they believe if they would fast without water their wish fulfil.

जहाँ पालीवाल ने सम्पूर्ण वाक्य का अनुवाद नहीं किया है, वहीं श्रीवास्तव ने 'एकादशी' के लिप्यंतरण तथा शब्द संग्रह में एक अस्पष्ट व्याख्या के द्वारा अपने कार्य को पूर्ण मान लिया है।
ऐसे ही कुछ अन्य शब्द 'तुलसीदल' और 'चरणामृत' के अंग्रेज़ी अनुवादों की मूल कृति से तुलना के लिए कुछ वाक्य दृष्टव्य हैं -

मूलपाठ -

''सुखदा ने मन्दिर से तुलसीदल लाकर अर्थियों पर रखा और मरनेवालों के मुख में चरणामृत डाला।'' [32]

रीतारानी पालीवाल -

"Sukhada brought the tulasi leaves from the temple and kept them on the biers and dropped charnamrit in the mouth of the dead". [33]

ललित श्रीवास्तव -

"Sukhada fetched sacred tulsi leaves from the temple and, put it on the biers, and some drops of holy water in the mouths of the dead ones." [34]

उपर्युक्त दोनों अनूदित पंक्तियों में 'तुलसीदल' का अनुवाद क्रमशः *tulasi leaves* और *tulsi leaves* किया गया है। जिनकी वर्तनी में भिन्नता के अलावा अन्य कोई अन्तर नहीं है, क्योंकि दोनों का अर्थ तुलसी की पत्ती है। अनूदित पंक्तियों से यह पूर्ण रूप से स्पष्ट हो रहा है कि *tulsi leaves* पवित्र होती है और मन्दिर में चढ़ाई जाती है। परन्तु तुलसी का नाम लेते ही जो चित्र हमारी आँखों के सामने उभरकर आता है वैसा चित्रण दोनों अनूदित कृतियाँ विषम सांस्कृतिक पाठकों के सामने प्रस्तुत करने में पूर्ण रूप से सफल नहीं हैं और न ही हो सकती हैं और इसका कारण है इस प्रकार के पदों का संस्कृतिनिष्ठ होना।

इसी प्रकार 'चरणामृत' के संस्कृतिनिष्ठ पद होने के कारण रीतारानी पालीवाल ने इस पद का लिप्यंतरण *charnamrit* किया, जबकि 'तुलसीदल' का आंशिक लिप्यंतरण *tulasi leaves* किया है जिससे चरणामृत की तुलना में तुलसीदल ज़्यादा संप्रेषणीय हो गया है।

इसके विपरीत ललित श्रीवास्तव ने 'चरणामृत' का अनुवाद *holy water* करके चरणामृत का प्रभाव उत्पन्न करने का असफल प्रयास किया है। जिसका शाब्दिक अर्थ पवित्र जल होता है। जबकि 'चरणामृत' का शाब्दिक अर्थ चरण का अमृत है जो कि दूध, दही, गंगाजल, घी, तुलसीदल, मेवों, सुगंधित द्रव्य से निर्मित करके इष्टदेव के चरणों में चढ़ाया जाता है और प्रसादस्वरूप भक्तगणों को वितरित किया जाता है। यहाँ श्रीवास्तव द्वारा 'चरणामृत' का अनुवाद holy water गंगाजल की तरफ़ संकेत करता है क्योंकि भारतीय संस्कृति में मरने वाले के मुख में गंगाजल डाला जाता है। मूल कृति की हिन्दी पंक्तियों में सुखदा द्वारा मरनेवालों के मुख में चरणामृत इसलिए डाला

गया क्योंकि इसमें गंगाजल मिला था और यह ठाकुर जी के चरणों का प्रसाद था। परन्तु श्रीवास्तव द्वारा *holy water* अनुवाद मात्र 'चरणामृत' की पवित्रता की तरफ़ संकेत करता है।

इस प्रकार 'तुलसीदल' और 'चरणामृत' के जो अनुवाद दोनों अनुवादकों द्वारा प्रस्तुत किये गये हैं वे दोनों ही पूर्णरूप से संस्कृतिनिष्ठ होने के कारण संप्रेषणीय नहीं हैं। यहाँ एक तथ्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि ललित श्रीवास्तव ने 'तुलसीदल' का आंशिक लिप्यंतरण *tulsi leaves* किया है। जिसका शाब्दिक अर्थ तुलसी की पत्तियाँ हैं जबकि अनूदित पुस्तक के अंत, शब्दावली संग्रह में इस पद की व्याख्या इन्होंने कुछ इस प्रकार की है -

"tulsi-dal : paste made of ground leaves of tulsi, a holy herb, holy basil." [35]

उपर्युक्त अंग्रेज़ी की पंक्तियों में *tulsi-dal* को एक *paste* कहा गया है, जबकि श्रीवास्तव जी ने अपनी अनूदित कृति में इसका अनुवाद *tulsi leaves* प्रस्तुत किया है। जिसका अर्थ तुलसी की पत्तियाँ होता है न कि *paste* । अगर इस पद की व्याख्या कुछ इस प्रकार की जाती तो यह ज़्यादा बोधगम्य होता -

tulsi-dal : leaves of tulsi, a holy herb. which is worship by religious Hindu specially in the month of Kartik.

ऐसा ही एक अन्य सांस्कृतिक शब्द 'फ़ाग' है, जो फागुन माह में भारतीयों द्वारा होली के समय गाया जाता है। इस शब्द का अनुवाद रीतारानी पालीवाल ने नहीं किया है, जबकि ललित श्रीवास्तव ने इसका लिप्यंतरण *Phag* किया है और शब्दावली संग्रह में इसके लिए संप्रेषणीय व्याख्या प्रस्तुत की है जो कि सराहनीय है -

"Phag: a song sung collectively at Holi in the month of phagun". [36]

प्रस्तुत लघु शोध-प्रबंध में दोनों अनुवादकों द्वारा मूल कृति के सांस्कृतिक शब्दों के अनुवाद की मूल पाठ से तुलना उपरांत, सांस्कृतिक दृष्टि से सबसे महत्त्वपूर्ण लोकोक्तियों तथा मुहावरों के अनुवाद का तुलनात्मक अध्ययन आवश्यक हो जाता है क्योंकि ''लोकोक्तियाँ और मुहावरे समाज के लिए सामूहिक अनुभव की ठोस अभिव्यक्ति होते हैं। इसलिए डच भाषा में कहावत को 'दिन-प्रतिदिन के अनुभव की पुत्री' कहा गया है। इनमें मानव जाति के संपूर्ण अनुभवों का निचोड़

मौजूद रहता है। इसलिए ये भाषा में लवणवत् माने गए हैं। अरबी लोग इन्हें शब्दों का दीपक कहते हैं।'' [37]

लोकोक्तियाँ तथा मुहावरे अनुभवजन्य धरोहर हैं। जो सदियों से जनमानस के बीच प्रचलित हैं। लोकोक्तियाँ तथा मुहावरे मात्र भाषिक अभिव्यक्ति नहीं हैं बल्कि प्रत्येक लोकोक्ति तथा मुहावरे की उत्पत्ति के पीछे कोई-न-कोई घटना अथवा कहानी अवश्य छिपी होती है। जिससे प्रेरित होकर ये उक्तियाँ धीरे-धीरे हमारे समाज का हिस्सा बन जाती हैं और जनसाधारण इन्हें बोलचाल की भाषा में प्रयुक्त करने लगता है। यही लोकोक्तियाँ और मुहावरे जब किसी रचना में प्रयुक्त होती हैं, तब वह कृति बहुत प्रभावशाली बन जाती है। लोकोक्तियों और मुहावरों का प्रयोग भाषा को प्रभावशाली तो अवश्य बनाता है परन्तु समस्या तब खड़ी हो जाती है, जब अनुवादक स्रोत भाषा के लोकोक्तियों और मुहावरों का अनुवाद लक्ष्य भाषा की लोकोक्तियों और मुहावरों में करने का प्रयास करता है।

अनुवादकों द्वारा स्रोत भाषा की लोकोक्तियों और मुहावरों का लक्ष्य भाषा में प्रभावशाली अनुवाद करने के लिए, सर्वप्रथम इन दोनों के बीच के अन्तर को समझना एक महत्त्वपूर्ण शर्त है। क्योंकि इनके बीच के अन्तर को समझे बिना इनका सफल अनुवाद करना मुश्किल होगा। लोकोक्तियाँ अपने आप में पूर्ण होती हैं। वे इतिहास की किन्हीं विशिष्ट घटनाओं एवं स्थितियों की उपज होती हैं। इनमें विचारों की पूर्ण अभिव्यक्ति होती है। ये वाक्यांश न होकर एक सम्पूर्ण वाक्य होती हैं। जबकि मुहावरा वाक्य का अंश होता है और वाक्य में रखें जाने पर ही इसकी अभिव्यक्ति पूर्ण होती है जैसे - 'आँखें खुलना', 'आँखों का तारा' का अर्थ वाक्य में रखे जाने पर ही स्पष्ट होता है, यथा - मेरा दूधवाला हमेशा प्यार से बोलता रहा और मुझे मालूम नहीं पड़ा। मेरी तो तब आँखें खुलीं जब मैंने दूध को लीटर से नापा'। लेकिन लोकोक्तियाँ स्वयं में एक सम्पूर्ण वाक्य होती हैं तथा इन्हें वाक्य के सहारे की आवश्यकता नहीं होती है, जैसे - 'अब पछताए क्या होत है जब चिड़िया चुग गई खेत' स्वयं में एक पूर्ण वाक्य है।

मुहावरे भाषा को लाक्षणिकता प्रदान करने के लिए प्रयुक्त किए जाते हैं। रचनाकार जब अपनी अभिव्यक्ति को विशेषता प्रदान करना चाहता है, तब उसकी इच्छा मुहावरों के द्वारा पूर्ण होती है। क्योंकि भाषा को वक्र अभिव्यक्ति मुहावरों से प्राप्त होती है। मुहावरों की तुलना में लोकोक्तियों में लोकजीवन ज़्यादा व्यंजित होती है। क्योंकि लोकानुभव की आग में तपकर ही कोई उक्ति लोकोक्ति

का रूप धारण करती है। इसीलिए अनुवादक के लिए यहाँ एक प्रमुख समस्या उत्पन्न हो जाती है कि वह इनका अंतरण स्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा में किस प्रकार करे कि जिससे यह विषम-सांस्कृतिक पाठक तक पूर्णरूप से संप्रेषणीय हो सके।

तुलनात्मक रूप से लोकोक्तियों में मुहावरों की तुलना में ''सांस्कृतिक-ऐतिहासिक संदर्भ का पूरा लोक रहस्य अंतर्निहित होता है, इसलिए उनके अभिव्यंजक शब्द विशिष्ट-विशिष्ट अर्थ-संदर्भों के वाहक होते हैं।'' [38] जिस कारण इनके अनुवाद में अनुवादक को विशेष कठिनाई का सामना करना पड़ता है। प्रत्येक देश की अपनी अलग-अलग संस्कृति होती है। जिसकी झलक लोकोक्तियों में दिखलाई पड़ती है। लोकोक्तियाँ स्थानीय विशेषताओं से परिपूर्ण होती हैं। इसमें लोकजीवन संबंधी सभी रंग अपनी पूर्ण छटा के साथ मौजूद होते हैं। अक्सर ऐसा होता है कि देश के एक क्षेत्र में बोली जाने वाली लोकोक्ति को अन्य क्षेत्र का व्यक्ति समझ पाने में असमर्थ होता है। ऐसी स्थिति में विषम सांस्कृतिक, विषम भाषा-भाषी व्यक्ति की कठिनाई का महज़ आन्दाज़ा ही लगाया जा सकता है।

''हर भाषा की लोकोक्तियाँ, नवीन उपमाओं और नवीन भावों की निजता में एक विशिष्ट ढंग की प्रतिभा का संकेत देती है।'' [39] इसलिए इनका अनुवाद करने से पूर्व अनुवादक से दोनों भाषाओं की गूढ़ समझ अपेक्षित होती है।

लोकोक्तियों और मुहावरों की दृष्टि से अगर देखा जाय तो 'कर्मभूमि' एक सम्पन्न रचना है। इसलिए दोनों अनुवादकों के लिए इनका अनुवाद करना न केवल एक प्रमुख समस्या है बल्कि अनुवाद का कार्य सर्जनात्मक कृत्य होता है और किसी कहावत का अनुवाद कहावत में न करके सीधे-सीधे शब्दों में कहना, उस सर्जनात्मक कृत्य को क्षति पहुँचाना है। अतः प्रस्तुत लघु शोध-प्रबंध में दोनों अनुवादकों द्वारा मूल कृति में आये हुए लोकोक्तियों और मुहावरों का अनुवाद तथा उनकी मूल कृति से तुलना और अनुवादकों की शैलीगत विशिष्टता की चर्चा आवश्यक हो जाती है।

क. पाठ आधारित लोकोक्तियाँ

1. लोकोक्ति - 'धोबी का कुत्ता, घर का न घाट का'

मूलपाठ - धोबी का कुत्ता, घर का न घाट का (पृ. 79)

रीतारानी पालीवाल - 'A washerman's dog belongs neither here nor there' (पृ. 69)

ललित श्रीवास्तव - 'A dhobhi's dog belongs neither at home nor at the ghat (पृ. 96)

तुलनात्मक अध्ययन - इस लोकोक्ति का अर्थ है, जो दो भिन्न पक्षों से जुड़ा रहता है वह कहीं का नहीं रहता। मूल कृति में भी इस लोकोक्ति का यही अर्थ व्यंजित हो रहा है। पालीवाल तथा श्रीवास्तव ने शब्दानुवाद के द्वारा इस लोकोक्ति के अर्थ को व्यंजित करने का प्रयास किया है। जिसमें पालीवाल को सफलता भी प्राप्त हुई है। श्रीवास्तव ने 'धोबी' और 'घाट' के प्रयोग द्वारा प्रेमचन्द जैसा प्रभाव उत्पन्न करने का प्रयास किया है। जिसके कारण यह लोकोक्ति विषम सांस्कृतिक पाठक के लिए अबोधगम्य हो गयी, क्योंकि धोबी और घाट, एक सांस्कृतिक शब्द हैं। *धोबी* का अनुवाद अगर *washerman* कर भी दिया जाए तो घाट की अननूद्यता के कारण समस्या बनी रहती है। इसलिए श्रीवास्तव की तुलना में पालीवाल द्वारा किया गया अनुवाद सराहनीय है।

प्रस्तावित : हिन्दी की लोकोक्ति 'धोबी का कुत्ता, घर का न घाट का' के समतुल्य अंग्रेज़ी भाषा में कुछ लोकोक्तियाँ प्रचलित हैं, यथा-

(i) "Between two stools and you come to the ground." [40]

(ii) "Neither fish in or fowl." [41]

अंग्रेज़ी की उपर्युक्त दोनों लोकोक्तियों का भावार्थ मूल कृति की हिन्दी लोकोक्ति के समान है। अतः अनूदित कृतियों में अंग्रेज़ी की इन लोकोक्तियों का प्रयोग किया जा सकता है। साथ ही पालीवाल द्वारा इस लोकोक्ति के लिए किया गया अनुवाद भी संप्रेषणीय है अतः स्वीकार्य है।

2. लोकोक्ति - ओखली में सिर दिया तो मूसलों का क्या डर?

मूलपाठ - 'अब ओखली में सिर डालकर तुम मूसलों से नहीं बच सकते।' (पृ. 36)

रीतारानी पालीवाल - इन्होंने इस पंक्ति का अनुवाद नहीं किया है।

ललित श्रीवास्तव - 'You can't escape the consequences of your deeds.' (पृ. 42)

तुलनात्मक अध्ययन :- इस लोकोक्ति का सामान्य अर्थ है, कठिन काम को हाथ में ले लेने पर आनेवाली बाधाओं से विचलित न होना। रीतारानी पालीवाल ने इस लोकोक्ति तथा इससे संबंधित दो-तीन पंक्तियों का अनुवाद नहीं किया है। ललित श्रीवास्तव ने इस लोकोक्ति का लक्ष्य भाषा में व्याख्यात्मक अनुवाद करने का प्रयास किया है। अनुवाद के लिए यह आवश्यक होता है कि अनुवादक स्रोतभाषा के भावों को अच्छी तरह समझे और उस भाव की रक्षा लक्ष्य भाषा में करने

का प्रयास करे। श्रीवास्तव ने हिन्दी की इस प्रचलित लोकोक्ति के भावों और अर्थों की गहनता को समझकर उसे अंग्रेज़ी भाषा में अभिव्यक्त करने का सफल प्रयास किया है।

प्रस्तावित - 'ओखली में सिर दिया तो मूसलों का क्या डर? इसके लिए अंग्रेज़ी भाषा में कई लोकोक्तियाँ हैं, यथा-

(i) "Why fear wetting when in for a swim" [42]

(ii) He who would catch fish must not mind getting wet.

(iii) things ones begun must be concluded at all costs.

अंग्रेज़ी की उपर्युक्त लोकोक्तियों की अगर तुलना की जाए तो तीनों लोकोक्तियों का शाब्दिक अर्थ अलग-अलग है। किन्तु भावार्थ एक ही है। परन्तु, फिर भी श्रीवास्तव द्वारा किया गया अनुवाद मूल के काफ़ी नज़दीक होने और मूल कृति के वाक्यानुसार होने के कारण अंग्रेज़ी की उपर्युक्त तीनों लोकोक्तियों की तुलना में ज़्यादा व्यंजित हो रहा है और कथा प्रवाह में भी बाधक नहीं है। इसलिए श्रीवास्तव द्वारा किया गया अनुवाद ग्रहणीय है तथा इसके लिए अन्य लोकोक्ति की प्रस्तावना उचित नहीं होगी।

3. लोकोक्ति - 'अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता'

मूलपाठ - 'अकेला चना तो भाड़ नहीं फोड़ सकता' (पृ. 184)

रीतारानी पालीवाल - 'a lone soldier cannot win the war.' (पृ. 154)

ललित श्रीवास्तव - 'roasting a single chick pea will not explode the oven.' (पृ. 228)

तुलनात्मक अध्ययन - विवेच्य लोकोक्ति का अर्थ यह है कि समूह के द्वारा किया जा सकने वाला कठिन कार्य अकेला व्यक्ति नहीं कर सकता है। इस अर्थ के आलोक में देखा जाय तो दोनों अनुवादकों द्वारा किया गया अनुवाद ठीक प्रतीत होता है। यद्यपि इन दोनों की शैलियों में भिन्नता अवश्य दिखलाई पड़ती है। श्रीवास्तव ने जहाँ शब्दानुवाद के द्वारा इस लोकोक्ति को अंग्रेज़ी में अनूदित किया, वहीं पालीवाल ने भावानुवाद के माध्यम से लोकोक्ति को अंग्रेज़ी भाषा में अभिव्यक्त किया है। श्रीवास्तव ने हिन्दी भाषा की इस लोकोक्ति के अनुवाद के लिए शब्दानुवाद का सहारा लिया। इन्होंने 'चने' के स्थान पर *pea* तथा 'भाड़' के स्थान पर *oven* के प्रयोग द्वारा अंग्रेज़ी भाषा

की संस्कृति के अनुरूप मुहावरा गढ़कर अपनी सर्जनात्मक क्षमता का परिचय दिया है। फिर भी अगर भाव की दृष्टि से देखा जाय तो पालीवाल द्वारा किया गया अनुवाद मूल के सन्निकट है।

प्रस्तावित - दोनों अनुवादकों द्वारा 'अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता' के लिए अंग्रेज़ी संस्कृति के अनुरूप प्रभावशाली अनुवाद किया गया है। जिनसे मिलती जुलती एक लोकोक्ति उदाहरणस्वरूप दृष्टव्य है -

(i) "United you can what singly you can't" [43]

परन्तु दोनों अनुवादकों द्वारा अनूदित लोकोक्तियों और प्रास्तावित लोकोक्ति की तुलना के उपरांत, पालीवाल द्वारा अनूदित लोकोक्ति को ही प्रस्तावित करना मूलकृति की इस लोकोक्ति के भावों की रक्षा हेतु उचित प्रतीत होता है।

4. लोकोक्ति - 'नक्कारख़ाने में तूती की आवाज़'

मूलपाठ - 'नक्क़ारखाने में तूती की आवाज़' (पृ. 206)

रीतारानी पालीवाल - इस लोकोक्ति का अनुवाद नहीं किया है।

ललित श्रीवास्तव - ' In a world ruled by the powerful, who would listen to us humble people,' (पृ. 256)

तुलनात्मक अध्ययन - इस लोकोक्ति का अर्थ यह है कि बड़ों के बीच छोटे आदमी की कौन सुनता है। श्रीवास्तव ने इस लोकोक्ति के लिए व्याख्यात्मक अनुवाद का सहारा लिया और स्रोत भाषा की उपर्युक्त लोकोक्ति के भावों को लक्ष्य भाषा में अंतरित करने में सफलता प्राप्त की। व्याख्यात्मक अनुवाद के लिए अनुवादक को कहावत के अर्थ को आत्मसात् करना आवश्यक होता है; क्योंकि यदि अनुवादक कहावत के अर्थ को भली-भाँति समझ लेता है तब वह लोकोक्ति को भिन्न-भिन्न तरीके से अनूदित कर सकता है। यद्यपि 'नक्क़ारखाने में तूती की आवाज़ कहावत में उर्दू भाषा का जो पैनापन दिखलाई पड़ता है, वह श्रीवास्तव द्वारा इस कहावत के अनुवाद में नदारद है। फिर भी लोकोक्तियों के अनुवाद में होनेवाली कठिनाईयों को ध्यान में रखते हुए श्रीवास्तव के अनुवाद को अस्वीकारा नहीं जा सकता है। क्योंकि इनके अनुवाद में सपाटता तो ज़रूर है परन्तु ये मूल कहावत के अर्थ की रक्षा करने में पूर्ण रूप से सफल रहे हैं।

प्रस्तावित - यद्यपि श्रीवास्तव द्वारा अनूदित यह कहावत मूल के भावों को संप्रेषित करने में सक्षम है, परन्तु कहावतों का प्रयोग भावों और अर्थों के संप्रेषण हेतु ही नहीं किया जाता है। अपितु यह

भाषा को अभिव्यंजनात्मक दक्षता प्रदान करती है। इसलिए अनूदित लोकोक्ति में स्रोत भाषा की लोकोक्ति जैसी ही लय और तुकबन्दी हो तो ज़्यादा अच्छा होगा। प्रेमचन्द जैसी सर्जनात्मक क्षमता वाले व्यक्ति की रचनाओं का अनुवाद करते समय अनुवादकों को इस बात का ख़ास ध्यान रखना होगा कि प्रेमचन्द की रचनाओं में कुछ भी अकारण नहीं है। यदि उनके पात्र एक दूसरे से वार्तालाप में लोकोक्तियों का प्रयोग कर रहे हैं तो वह इसलिए कि, उनके द्वारा कही बात गंभीरता से ग्रहण की जाय। यदि ग्रामीण पात्र ऐसी किसी लोकोक्ति का अपनी बोलचाल की भाषा में प्रयुक्त कर रहे हैं तो वह इसलिए कि यह मात्र कृति को प्रभावशाली बनाने के लिए प्रेमचन्द द्वारा शब्दों का मायाजाल नहीं है। अपितु वास्तव में प्रेमचन्द की रचनाओं के पात्र ऐसी कहावतों का प्रयोग करते हैं। उपरोक्त सन्दर्भ में इस कहावत के लिए अंग्रेज़ी भाषा की एक कहावत, जो इसके समतुल्य है; प्रयुक्त की जा सकती है, यथा-

"A little sound, however sweet, is drowned under a loud one." [44]

यदि अंग्रेज़ी की उपर्युक्त लोकोक्ति का प्रयोग मूल कृति में किया जाय तो अन्तर स्वयं ही स्पष्ट हो जायेगा, उदाहरणार्थ -

He said happily, ' A little sound, however sweet, is drowned under a loud one; auntie?

प्रस्तावित लोकोक्ति में मूल कृति की लोकोक्ति जैसी लय और तुकबंदी है जो श्रीवास्तव के अनुवाद में नहीं दिखलाई पड़ती है। अत: प्रस्तावित लोकोक्ति के प्रयोग से प्रेमचन्द की अभिव्यक्ति शैली के थोड़ा नज़दीक पहुँचा जा सकता है।

5. लोकोक्ति - 'छोटे मुँह बड़ी बात'
मूलपाठ - 'छोटे मुँह बड़ी बात' (पृ. 174)
रीतारानी पालीवाल - अनुवाद नहीं किया है।
ललित श्रीवास्वत - 'a dog yapping at an elephant' (पृ. 216)

तुलनात्मक अध्ययन - 'छोटे मुँह बड़ी बात' कहावत का शाब्दिक अर्थ होता है - सामार्थ्य से अधिक के बारे में डींग मारना। इस सन्दर्भ में अगर देखा जाय तो श्रीवास्तव द्वारा किया गया अनुवाद

अर्थगत दृष्टि से मूल से किंचित् भिन्न प्रतीत होता है क्योंकि *dog yapping at an elephant* का शाब्दिक अर्थ अनूदित पंक्तियों में कुछ अलग ही ध्वनित हो रहा है, यथा -

"For you to cast aspersions on that noble soul is like a dog yapping at an elephant." [45]

हाथी के ऊपर कुत्ते का भौकना उसके बड़बोलेपन या सामार्थ्य से अधिक डींग मारने को नहीं दर्शाता बल्कि कुत्ते के दुस्साहस को ज़्यादा व्यंजित कर रहा है। जबकि मूल कृति में इस कहावत का अर्थ सामर्थ्य से अधिक डींग मारना ध्वनित हो रहा है, यथा -

''आपका उस महान् आत्मा पर छींटे उड़ाना छोटे मुँह बड़ी बात है।'' [46]

प्रस्तावित - उपर्युक्त पंक्तियों के अंग्रेज़ी अनुवाद में यदि अंग्रेज़ी की निम्नलिखित कहावत का प्रयोग किया जाय तब अनुवाद मूल के अधिक निकट होगा।

"A minnow talking like a whale" [47]

यदि अंग्रेज़ी की उपर्युक्त कहावत का प्रयोग मूल कृति के अनुवाद में किया जाय तो स्रोत भाषा के भावों का संप्रेषण यथावत् लक्ष्य भाषा में हो सकेगा, जैसे -

'For you to cast aspersions on that nobel soul is like a minnow talking like a whale.'

6- लोकोक्ति - 'लातों के भूत बातों से नहीं मानते'

मूलपाठ - 'लातों के देवता कहीं बातों से मानते हैं (पृ. 48)

रीतारानी पालीवाल - इस लोकोक्ति का अनुवाद नहीं किया है।

ललित श्रीवास्तव - "People who are used to being kicked don't listen to persuasion." (पृ. 58)

तुलनात्मक अध्ययन - श्रीवास्तव ने इस लोकोक्ति का व्याख्यात्मक शब्दानुवाद प्रस्तुत किया है जो इस कहावत के अर्थ को संप्रेषित करने में सक्षम है।

प्रस्तावित - 'लातों के देवता बातों से नहीं मानते' लोकोक्ति के लिए अंग्रेज़ी भाषा में कुछ लोकोक्तियाँ प्रचलित हैं। जिसका प्रयोग यहाँ किया जा सकता है।

(i) 'Mere words do not suffice, where rod is necessary.' [48]

(ii) 'Rod is the logic of fools.' [49]

(iii) 'Honey is not for the ass's mouth.'[50]

अंग्रेज़ी भाषा की उपर्युक्त तीनों कहावतें हिन्दी कहावत के समान भाव पैदा कर रही हैं अत: इनमें से किसी का भी प्रयोग किया जा सकता है।

7. लोकोक्ति - 'गुड़ खाए गुलगुलों से परहेज़।'

मूलपाठ - 'गुड़ खाते हैं, गुलगुले से परहेज़ करते हैं।' (पृ. 77)

रीतारानी पालीवाल - 'swallow a camel to strain a gnat.' (पृ. 66)

ललित श्रीवास्तव - 'eat gur, but avoid sweets.' (पृ. 93)

तुलनात्मक अध्ययन - इस लोकोक्ति का अर्थ है, झूठा ढोंग रचना। इस सन्दर्भ में पालीवाल द्वारा अनूदित *swallow a camel to strain a gnat* मूल के अर्थ को व्यक्त कर रहा है परन्तु श्रीवास्तव द्वारा अनूदित *eat gur, but avoid sweets* न तो *गुड़ खाना गुलगुलों से परहेज़* करना जैसी गहन अभिव्यक्ति से युक्त है और न ही यह विषम सांस्कृतिक पाठकों तक संप्रेषणीय है क्योंकि 'गुड़' एक ऐसा शब्द है जिसे विषम सांस्कृतिक व्यक्ति के लिए समझना दुष्कर होगा। इन्होंने इस लोकोक्ति के अनुवाद में लिप्यंतरण का सहारा लिया। यहाँ 'गुड़' को *gur* लिखने का आशय तो शायद यह है कि वह अनूदित कृति को मूल कृति के समान ही सांस्कृतिक रंग देना चाहते हैं परन्तु 'गुलगुले' के लिए *sweets* अनुवाद करना, उनके उपर्युक्त आशय की पुष्टि नहीं करता।

प्रस्तावित - ललित श्रीवास्तव द्वारा अनुवाद को इस प्रकार भी किया जा सकता था, यथा -

'eat gur, but avoid gulgula'

प्रस्तावित अनुवाद में आये *gur* और *gulgula* को शब्दावली संग्रह में समझाया जा सकता है। परन्तु उचित यह होगा कि इस लोकोक्ति के समतुल्य अंग्रेज़ी भाषा की कोई लोकोक्ति प्रयुक्त की जाए। अंग्रेज़ी की एक लोकोक्ति 'A barrister but hating cross question'[51] का अर्थ मूल के समान है, परन्तु अंग्रेज़ी की इस लोकोक्ति का प्रयोग यहाँ नहीं किया जा सकता है, क्योंकि वाक्यानुसार पालीवाल द्वारा अनूदित *swallow a camel to strain a gnat* मूल के भावों और अर्थों का निकटतम समतुल्य है और वाक्यसंरचना के अनुसार उचित बैठता है। जबकि *A barrister but hating cross question* वाक्य संरचना के अनुसार सही नहीं है, उदाहरणार्थ -

'It means you are a barrister but hating cross question'.

सबसे अहम तथ्य है कि अंग्रेज़ी की यह लोकोक्ति मूल के अर्थों के समान होते हुये भी एक अर्थ में भिन्न है और वह है मूल को जिस ढंग से कहा गया है, वह अंग्रेज़ी की इस लोकोक्ति से भिन्न है। मूल कहावत में खाने के सन्दर्भ में, जबकि अंग्रेज़ी की इस कहावत में पेशे के सन्दर्भ में अभिव्यजंनात्मकता प्रदान की गई है। अत: अनुवादक के लिए यह बहुत महत्त्वपूर्ण है कि वह लोकोक्ति का अनुवाद मूल कृति की शैली में करे।

अत: पालीवाल द्वारा प्रस्तुत अनुवाद को थोड़ा बदलाव के साथ प्रयुक्त करना ठीक होगा -

'It means you strain at a gnat, and swallow a camel'.

(ख) पाठ आधारित मुहावरे

मुहावरे भाषा को लाक्षणिकता प्रदान करते हैं, यही कारण है कि इन्हें भाषा की लाक्षणिकता की धरोहर कहा जाता है। मुहावरों का एक निश्चित अर्थ होता है, इसके बावजूद ये प्रयोगकर्त्ताओं के मनोभावों को गहराई प्रदान करते हैं। इनके प्रयोग से वक्ता, सामने वाले पर गहरा प्रभाव डालता है क्योंकि मुहावरे स्वयं में व्यापक अर्थ को समेटे होते हैं। जिस लेखक की मुहावरों पर पकड़ जितनी ज़्यादा होगी उसकी अभिव्यक्ति भी उतनी ही तीव्र होगी।

'कर्मभूमि' में प्रेमचन्द ने मुहावरों के प्रयोग से इस उपन्यास की सर्जनात्मकता का विस्तार किया है। समस्या यहीं उत्पन्न होती है क्योंकि जो रचना इस प्रकार के तत्त्वों से जितनी ज़्यादा सम्पन्न होगी उसके अनुवाद में अनुवादकों को उतनी ही समस्या का सामना करना पड़ेगा। 'कर्मभूमि' में प्रेमचन्द ने वक्र अभिव्यक्ति हेतु कई मुहावरों का प्रयोग किया, जिसका अनुवाद दोनों अनुवादकों द्वारा विभिन्न तरीकों से किया गया है। परन्तु क्या वे मूल के भावों को पकड़ पाये हैं या फिर उन्होंने त्रुटिपूर्ण अनुवाद किया है। इस हेतु कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं-

1. मूलपाठ - 'नानी मर रही थी' (पृ. 85)

मुहावरा - 'नानी मर जाना'

अर्थ - ''होश उड़ना, संकट में घबरा जाना''[52]

रीतारानी पालीवाल - अनुवाद नहीं किया

ललित श्रीवास्तव - 'feeling mortified' (पृ. 103)

तुलनात्मक अध्ययन - नानी मर जाना का अर्थ होश उड़ना या संकट में घबरा जाना होता है। जबकि ललित श्रीवास्तव ने इसका अर्थ *feeling mortified* किया है। जिसका अर्थ अपमानित महसूस करना होता है। फादर कामिल बुल्के अँगरेजी हिन्दी कोश के अनुसार *mortified* का अर्थ "1. दमन करना, वश में रखना, 2. अपमानित करना, नीचा दिखाना"[53] होता है। अर्थ के इस सन्दर्भ में ललित श्रीवास्तव द्वारा अनूदित मुहावरा मूल के अर्थ को संप्रेषित नहीं कर रहा है।

प्रस्तावित - यहाँ 'To be perplexed in problem' का प्रयोग किया जा सकता है। जिसका शाब्दिक अर्थ है, परेशानी में घबराना।

2. मूलपाठ - 'इसकी आँख का पानी मर गया' (पृ. 175)

मुहावरा - 'आँख का पानी गिरना'

अर्थ - "निर्लज्ज होना" [54]

रीतारानी पालीवाल - " She has lost all decency, she is shameless" (पृ. 144)

ललित श्रीवास्तव - "She is shameless" (पृ. 217)

तुलनात्मक अध्ययन - अनुवादकद्वय द्वारा किए गए अनुवाद मूल के अर्थ को पूरी तरह से संप्रेषित कर रहे हैं।

3. मूलपाठ - "मेरा कलेजा न ठण्डा होगा" (पृ. 94)

मुहावरा - 'कलेजा ठण्डा होना'

अर्थ - "चैन मिलना" [55]

रीतारानी पालीवाल - 'my heart will not console' (पृ. 84)

ललित श्रीवास्तव - "I won't relax" (पृ. 114)

तुलनात्मक अध्ययन - मूल कृति में यह मुहावरा नकारात्मक वाक्य के रूप में आया है। अत: अनुवादकों ने इसे नकारात्मक वाक्य के रूप में ही अनुवाद किया है। भावपरक अनुवाद का यह एक अच्छा उदाहरण है। अनुवादकों ने *relax* और *console* जैसे अंग्रेज़ी के शब्दों के द्वारा *चैन मिलना* को पूर्ण अर्थ प्रदान किया है।

4. मूलपाठ - "भूतों का डेरा" (पृ. 227)

मुहावरा - 'भूतों का डेरा'

अर्थ - 'जहाँ कोई न रहता हो'

रीतारानी पालीवाल - "like a haunted house" (पृ. 188)

ललित श्रीवास्तव - "like a haunted house." (पृ. 283)

तुलनात्मक अध्ययन - अनुवादकद्वय ने विदेशी संस्कृति के अनुरूप शाब्दिक अनुवाद किया है। जो मूल के अर्थ को विषम सांस्कृतिक व्यक्ति के लिए भी बोधगम्य बना रहा है।

5. मूलपाठ - ''खून का घूँट पीकर रह गये'' (पृ. 33)

मुहावरा - 'खून के घूँट पीना'

अर्थ - अत्यधिक क्रोध का आवेग सह लेना

रीतारानी पालीवाल - "swallowed a sip of his own blood" (पृ. 31)

ललित श्रीवास्तव - "swallowed his anger" (पृ. 38)

तुलनात्मक अध्ययन - खून के घूँट पीना का अर्थ है, अत्यधिक क्रोध का आवेग सह लेना। रीतारानी पालीवाल द्वारा अनूदित मुहावरे से भारतीय संस्कृति को जानने समझने वाला जो अर्थ ग्रहण करेगा यह आवश्यक नहीं है कि वही अर्थ विषम सांस्कृतिक व्यक्ति भी ग्रहण करे। क्योंकि पालीवाल द्वारा अनूदित मुहावरे का शाब्दिक अर्थ खून के घूँट पीना है। जिसे पढ़कर दो अलग-अलग संस्कृतियों से संबंधित व्यक्ति भिन्न-भिन्न अर्थ ग्रहण करेंगे। भारतीय मुहावरों से परिचित व्यक्ति इसका वही अर्थ ग्रहण करेगा जो वास्तव में इसका है। परन्तु इस मुहावरे से अपरिचित व्यक्ति इन पंक्तियों से साधारण अर्थ ग्रहण कर सकता है, जो कि *अपना खून पीना* ध्वनित हो रहा है। अत: अनुवादक को शाब्दिक अनुवाद करते समय ऐसी विषम स्थितियों से बचने का प्रयास करना चाहिए। श्रीवास्तव का अनुवाद पालीवाल की तुलना में ज़्यादा स्वीकार्य है, क्योंकि उनके द्वारा अनूदित मुहावरे का अर्थ *गुस्सा पीना* है। जो कि *खून का घूँट पीना* के शाब्दिक अर्थ 'अत्यधिक क्रोध का आवेग सह लेना' का समानार्थी है।

6. मूलपाठ - ''कुएँ में ढकेल दिया'' (पृ. -18)

मुहावरा - 'कुएँ में डालना'

अर्थ - ''जीवन व्यर्थ कर देना'' [56]

रीतारानी पालीवाल - "pushed me into this situation" (पृ. 16)

ललित श्रीवास्तव - "pushed me into a well." (पृ. 18)

तुलनात्मक अध्ययन - पालीवाल ने भावपरक अनुवाद करके 'कुएँ में ढकेल दिया' के शब्दानुवाद से बचने का प्रयास किया है क्योंकि श्रीवास्तव का अनुवाद, यथा -

"what can I say, you have pushed me into a well." [57]

मूल कृति का शब्द-प्रति-शब्द अनुवाद मात्र है, उदाहरणार्थ -

"तुमने मुझे कुएँ में ढकेल दिया और क्या कहूँ।" [58]

श्रीवास्तव द्वारा अनूदित यह मुहावरा वैसे तो ठीक है, किन्तु पाठक अगर इसे पढ़कर सुखदा के जीवन के व्यर्थ होने के भाव को नहीं ग्रहण करता है तो यह अनुवाद ग़लत माना जायेगा। पालीवाल ने इस समस्या के समाधान हेतु जो अनुवाद किया वह हिन्दी के मुहावरों के भाव को पूर्णरूप से व्यक्त करने में सक्षम तो नहीं है, परन्तु सम्पूर्ण वाक्य के अध्ययन से पाठक यह निष्कर्ष निकाल लेता है कि वह अपनी इस स्थिति को व्यर्थ मानती है और अपनी माँ रेणुका पर इसका आरोप लगा रही है कि वह इसकी इस स्थिति के लिए ज़िम्मेदार है। उदाहरणस्वरूप पालीवाल द्वारा अनूदित पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं -

"Sukhada said with a blush-'what to do Amma, I am in such a perplexity that I can not find a way. The father and the son do not have congenial relations. Dadaji wants him to see the household business but my husband says that he hates this trade. If I had left the house, I don't know what might have happened. You have pushed me into this situation, what else I can say?" [59]

उपर्युक्त पंक्तियों में विवेच्य मुहावरे का भाव सुखदा के जीवन की व्यर्थता यदि पाठक तक पूर्ण रूप से नहीं पहुँचती है तो अपूर्ण भी नहीं है।

विवेच्य लोकोक्तियों और मुहावरों के तुलनात्मक अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि दोनों अनुवादकों ने हिन्दी से अंग्रेज़ी में लोकोक्तियों और मुहावरों के अनुवाद के दौरान अधिकाशतः शब्द और अर्थ दोनों ही दृष्टियों से समान मुहावरे देने का प्रयास किया है। जहाँ अनुवादक को शाब्दिक और आर्थिक दोनों ही दृष्टियों से समान मुहावरे लक्ष्य भाषा में नहीं मिले हैं, वहाँ अनुवादक ने शाब्दिक अनुवाद किए हैं, जो लक्ष्य भाषा में स्रोत भाषा के सामान ही भाव और अर्थ व्यक्त करते हैं। कहीं-कहीं अनुवादकों ने व्याख्यात्मक अनुवाद किया है। पालीवाल द्वारा लोकोक्तियों और मुहावरों की अननूद्यता की स्थिति आने पर कई लोकोक्तियों और मुहावरों का अनुवाद नहीं किया गया है। श्रीवास्तव ने यद्यपि 'कर्मभूमि' की सम्पूर्ण लोकोक्तियों और मुहावरों का अनुवाद किया है, तथापि उनके द्वारा अनूदित लोकोक्तियाँ और मुहावरे पालीवाल की तुलना में त्रुटिरहित नहीं हैं।

मुहावरों और लोकोक्तियों के अनुवाद के समान ही सांस्कृतिक पदों के अनुवाद में भी लगभग वही प्रवृत्तियाँ दिखलाई पड़ती हैं। सांस्कृतिक पदों की मूल्यपरकता के कारण इनके लिए स्पष्टीकरण की पद्धति विशेष रूप से अपनाई गई है। जिसके अन्तर्गत पाद-टिप्पणी या शब्दावली संग्रह में ऐसे वाक्यों के बारे में समझाया जाता है जिसे हम पालीवाल और श्रीवास्तव द्वारा अनूदित कर्म में देख चुके हैं। स्पष्टीकरण की पद्धति के अतिरिक्त दो अन्य पद्धतियों का प्रयोग भी सांस्कृतिक शब्दों के अनुवाद के लिए किया गया है। या तो अनुवादकों ने ऐसे शब्दों का लिप्यंतरण कर दिया है अथवा निजी या विदेशी संस्कृति के अनुरूप इनका अनुवाद किया है।

संदर्भ-सूची

1. *भाषा संस्कृति और समाज* : (संपादक) डॉ. सोहन शर्मा, अभिकथन पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 1995, पृ. 27

2. *सांस्कृतिक विरासत व शिक्षा* : डॉ. सत्या के. शर्मा, बाल भवन एंग्लो एकेदमी, उदयपुर, 2005, पृ. 21

3. देखें, *भाषा, संस्कृति और समाज* : (सम्पादक) डा. सोहन शर्मा, अभिकथन पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 1995

4. *भारतीय संस्कृति का स्वरूप* : अमित कुमार शर्मा,कौटिल्य प्रकाशन,नई दिल्ली, 2006, पृ.21

5. *सांस्कृतिक विरासत व शिक्षा* : डा. सत्या के. शर्मा, पृ.22

6. *कर्मभूमि* : प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2008, आवृत्ति : 2010, पृ. 100

7. *Karmabhoomi,* Translated by Dr. Ritarani Paliwal,Frank Bros.of Co,2004,पृ.89

8. *Karmabhumi,* Translated by Lalit Srivastava, Oxford India, First published 2006,Second impression 2009,पृ. 121

9. *कर्मभूमि* : प्रेमचन्द, पृ. 33

10. *Karmabhumi,* Translated by Lalit Srivastava पृ. 38

11. *कर्मभूमि* : प्रेमचन्द, पृ. 68

12. *Karmabhoomi,* Translated by Dr. Ritarani Paliwal, पृ. 58

13. *Karmabhumi,* Translated by Lalit Srivastava, पृ. 82

14. *व्यावहारिक उर्दू-हिन्दी शब्दकोश* : (सम्पादक) डॉ. सैयद असद अली, राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली, नवीन संस्करण 2010, पृ. 112

15. *कर्मभूमि* : प्रेमचंद, पृ. 33

16. वही, पृ. 33

17 *Karmabhumi,* Translated by Lalit Srivastava, पृ. 38

18. वही, पृ. 38

19. *कर्मभूमि* : प्रेमचन्द, पृ. 207

20. वही, पृ. 209

21. *Karmabhoomi,* Translated by Ritarani Paliwal पृ. 172

22. *Karmabhumi,* Translated by Lalit Srivastava पृ. 257

23. वही, पृ. 260

24. *अनुवाद सिद्धांत और समस्याएँ,* (संपादक) रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, कृष्ण कुमार गोस्वामी, आलेख प्रकाशन, दिल्ली,संस्करण:1985 पृ. 19

25. *Karmabhumi,* Translated by Lalit Srivastava पृ. 357

26. वही, पृ. 355

27. वही, पृ. 356

28. वही, पृ. 354

29. *कर्मभूमि* : प्रेमचन्द, पृ. 133

30. *Karmabhumi,* Translated by Lalit Srivastava पृ. 163

31. वही, पृ. 354

32. *कर्मभूमि* : प्रेमचन्द, पृ. 149

33. Karmabhoomi, Translated by Ritarani Paliwal, पृ. 120

34. *Karmabhumi,* Translated by Lalit Srivastava पृ. 184

35. वही, पृ. 358

36. वही, पृ. 356

37. *अनुवाद विज्ञान* :(संपादक)डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी,प्रकाशन संस्थान,नई दिल्ली,2007,पृ.111

38. वही, पृ. 111

39. वही, पृ. 112

40. *कहावत कोश,* प्रस्तावना समर सिंह, राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट,दिल्ली, 2009,पृ. 133

41. *Bhargava's Standard Illustrated Dictionary of the Hindi Language,* Compiled & Edited by Prof. R. C. Pathak, Publisher: Bhargava Book Depot , Varanasi, Reprint 2008, पृ. 824

42. *कहावत कोश,* राजपाल एण्ड सन्ज़, पृ. 33

43. वही, पृ. 15

44. वही, पृ. 135

45. *Karmabhumi,* Translated by Lalit Srivastava पृ. 216

46. *कर्मभूमि :* प्रेमचन्द पृ. 174

47. *कहावत कोश,* राजपाल एण्ड सन्ज़, पृ. 88

48. वही, पृ. 196

49 *Bhargava's* Dictionary, Hindi-English, पृ. 827

50. वही, पृ. 827

51. *कहावत कोश,* राजपाल एण्ड सन्ज़, पृ. 73

52. *वृहत हिन्दी मुहावरा कोश,* (प्रधान संपादक), डॉ. भोलानाथ तिवारी, साहित्य सहकार, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1988, पृ.308

53. *अँगरेजी हिन्दी कोश,* फादर कामिल बुल्के, एस. चन्द एण्ड कम्पनी, प्रथम संस्करण, 1968, पृ. 413

54. *वृहत हिन्दी मुहावरा कोश,* पृ. 28

55 वही, पृ. 95

56. वही, पृ. 114

57. *Karmabhumi,* Translated by Lalit Srivastava पृ. 18

58. *कर्मभूमि :* प्रेमचन्द, पृ. 18

59. *Karmabhoomi,* Translated by Ritarani Paliwal, पृ. 16

उपसंहार

उपसंहार

प्रेमचन्द के 'कर्मभूमि' उपन्यास के अंग्रेज़ी अनुवादों के तुलनात्मक अध्ययन संबंधी इस लघु शोध-प्रबंध का उद्देश्य, तुलनात्मक अध्ययन के द्वारा मूल कृति के दोनों अनुवादों की समीक्षा करना है। तुलनात्मक अध्ययन तीन पक्षों वाली एक प्रक्रिया है। जिसके अन्तर्गत दोनों अनूदित कृतियों की मूल कृति के साथ तुलना तथा एक अनुवाद कर्म की दूसरे के साथ तुलना की जाती है। साथ ही इस प्रक्रिया में यह भी जानने का प्रयास किया जाता है कि मूल कृति के पाठकों पर पड़ने वाला प्रभाव अनूदित कृति में यथारूपेण उपस्थित है या नहीं; क्योंकि एक भाषा की पाठ्य साम्रगी को दूसरे भाषा की पाठ्य-साम्रगी से प्रतिस्थापित करने मात्र से ही अनुवादक का कार्य पूर्ण नहीं हो जाता, बल्कि स्त्रोत भाषा में व्यक्त भावों को लक्ष्य भाषा में संरक्षित रखते हुए इसे विषम सांस्कृतिक पाठकों तक संप्रेषित करना ही अनुवादक का ध्येय होना चाहिए।

प्रत्येक रचनाकार का अपना एक भावजगत होता है, जिसकी अभिव्यक्ति उसकी रचनाओं में बारंबार होती है। रचनाकारों की अभिव्यक्ति शैली की भिन्नता के कारण अनुवादकों को परेशानी का सामना करना पड़ता है। क्योंकि जिस प्रकार मूल कृति के रचनाकारों की पृथक्-पृथक् अभिव्यक्ति शैली होती है उसी प्रकार अनुवादक भी एक सर्जक है और अनूदित कृति में उनके मनोभावों और शैलीगत वैशिष्ट्य के प्रभाव को नकारा नहीं जा सकता है और यही कारण है कि अनुवादक को पुनर्सर्जक भी कहा जाता है। इसमें किंचित मात्र सन्देह नहीं है कि अनुवाद, पुनर्सृजन है और अनुवादक पुनर्सर्जक, तथापि अनुवाद की कुछ सीमाएँ हैं जिनका अतिक्रमण न तो अनुवाद कर्म के लिए ठीक है और न ही अनुवादक के लिए उचित।

'कर्मभूमि' उन्नीसवीं शताब्दी के चौथे दशक में लिखी गयी एक ऐसी कृति है जिसमें तत्कालीन भारत के गाँव-देहात, शहर-कस्बों, सवर्ण-अवर्ण, स्वाधीनता-पराधीनता, स्त्री-पुरुष तथा हिन्दू-मुस्लिम जैसे विचारणीय प्रश्नों को उठाया गया है। यह कृति केवल इसलिए ही महत्त्वपूर्ण नहीं है कि, यह उन सब प्रश्नों की तरफ़ संकेत करती है जो आधुनिक भारत की आधारशिला हैं और जिन्हें हल किए बिना हम एक समुन्नत भारत की परिकल्पना नहीं कर सकते हैं, बल्कि विस्तृत फलक वाली रचना होने के कारण, यह भाषिक और सांस्कृतिक संदर्भों में तुलनात्मक अध्ययन की दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण कृति है। इस प्रकार के शब्दों के महत्त्व तथा अनुवादकद्वय रीतारानी पालीवाल तथा ललित श्रीवास्तव द्वारा इनके लिए प्रस्तुत किये गये अनुवादों के तुलनात्मक अध्ययन

हेतु तृतीय अध्याय में, पाठ आधारित परंपरागत शब्दों के अनुवाद की सैद्धांतिकी पर विचार किया गया है तथा यह प्रस्तावित किया गया है कि प्रेमचन्द की इस कृति में ऐसे शब्दों का प्रयोग बहुतायत में है, जिनका अनुवाद बहुत कठिन है या फिर वे अननूद्य हैं। इसीलिए अनुवादकों ने अधिकांशतः उन्हें यथा-तथ्य रख दिया है। अधिकतर दोनों अनुवादकों ने लिप्यंतरण का सहारा लिया है। 'साधु-सन्त', 'ठाकुरद्वारा', 'यज्ञ', 'भजन' के लिए अनुवादकद्वय द्वारा क्रमशः *sadhu-saint, Thakurdwara, yagya* तथा *bhajan* लिप्यंतरण किया गया है, जो वर्तनी के स्तर पर भी समान हैं, जबकि कुछ शब्दों का लिप्यंतरण वर्तनी के स्तर पर भिन्न है, जैसे- 'पूजा' के लिए रीतारानी पालीवाल ने *Pooja* तथा ललित श्रीवास्तव ने *pūja* अनुवाद किया है। वर्तनी के स्तर पर इस भिन्नता का कोई स्पष्ट कारण नहीं दिखलाई पड़ता है क्योंकि हिन्दी के दीर्घ 'ऊ' के लिए लिए oo का प्रयोग दोनों अनुवादकों द्वारा किया गया है जबकि किन्हीं स्थानों पर, इसी दीर्घ 'ऊ' के लिए ū का प्रयोग किया गया है। अतः इस सन्दर्भ में किसी निश्चित सिद्धांत का पालन नहीं किया गया है। परंपरागत शब्दों के अनुवाद के लिए, अनुवादकों द्वारा कहीं-कहीं व्याख्यात्मक अनुवाद की पद्धति का भी अनुसरण किया गया है। दोनों ही अनुवादकों में यह प्रवृत्ति दिखलाई पड़ती है। परन्तु श्रीवास्तव ने इस पद्धति को पालीवाल की तुलना में ज़्यादा अपनाया है। इन्होंने 'चन्द्रोदय', 'यज्ञोपवीत' के लिए व्याख्यात्मक अनुवाद, *Chandrodaya, the Ayurvedic medicine* तथा *sacred-thread ceremony* किया है।

परंपरागत शब्दों की अननूद्यता के कारण अधिकतर अनुवादक इन शब्दों का अनुवाद छोड़ देता है। यह प्रवृत्ति रीतारानी पालीवाल के अनुवाद में दृष्टिगोचर होती है। लोप पद्धति अपनाकर इन्होंने इस प्रकार के शब्दों का अनुवाद छोड़ दिया है।

परंपरागत शब्दों के अनुवाद के लिए कुछ एक स्थानों पर अनुवादकद्वय ने स्त्रोतभाषा के शब्दों का अनुवाद लक्ष्य भाषा की विदेशी संस्कृति के अनुरूप किया है जैसे श्रीवास्तव ने 'तिलक' के लिए *glory* तथा 'भण्डार' के लिए *great feast* एवं 'गंगा-स्नान' के लिए दोनों अनुवादकों द्वारा क्रमशः *dip in Ganga, dip in the Ganges* अनुवाद किया गया है। इन पद्धतियों के अतिरिक्त इन्होंने परंपरागत शब्दों के अनुवाद के लिए एक अन्य पद्धति का प्रयोग किया जिसके अन्तर्गत इन्होंने स्त्रोत भाषा के शब्दों का निजी संस्कृति के अनुरूप लक्ष्य भाषा में अनुवाद किया है। इस प्रकार प्रस्तुत लघु शोध-प्रबंध के तृतीय अध्याय में परंपरागत शब्दों का वर्गीकरण कई श्रेणियों में

किया गया है, जिससे इस प्रकार के शब्दों का तुलनात्मक अध्ययन सरल और संभव हो सके तथा अनुवादकद्वय द्वारा अनुवाद के लिए प्रयुक्त पद्धतियों पर विचार किया जा सके।

'कर्मभूमि' के दोनों अंग्रेज़ी अनुवादों के भाषिक विश्लेषण के आधार पर तुलना करने के दौरान कई ऐसी समस्याओं पर विचार किया गया जो अनुवाद प्रक्रिया में दोनों अनुवादकों द्वारा महसूस की गई। साथ ही इस सन्दर्भ में दोनों अनुवादकों का परिवेश और कार्यक्षेत्र की भिन्नता भी उल्लेखनीय है क्योंकि रीतारानी पालीवाल कई अनुवाद कर्म कर चुकी हैं और अनुवाद के क्षेत्र से संबंधित कई रचनाएँ भी कर चुकी हैं, जबकि श्रीवास्तव जैविक विज्ञान से जुड़े हुए हैं और 'कर्मभूमि' का अंग्रेज़ी अनुवाद उनका पहला ही साहित्यिक कर्म है।

भाषिक विश्लेषण के दौरान 'कर्मभूमि' के अंग्रेज़ी अनुवाद के संदर्भ में जो प्रमुख समस्याएँ रेखांकित की गयी, उनमें से एक प्रमुख समस्या अनूदित कृति में विरामचिह्नों के प्रयोग की थी। अर्द्धविराम, अल्पविराम, पूर्णविराम के अधिक प्रयोग से प्रेमचन्द ने कथा प्रवाह को बनाये रखा। अधिकांशत: अनुवादकों ने भी विरामचिह्नों का वैसा ही प्रयोग किया है जैसा प्रेमचन्द ने।

इसी प्रकार मूल कृति का शीर्षक 'कर्मभूमि' है जबकि पालीवाल ने इसका अनुवाद *Karmabhoomi* और श्रीवास्तव ने 'डाइक्रिटिकल' (dicritical) पद्धति अपनाते हुए *Karmabhūmi* किया है। उच्चारण के स्तर पर ये दोनों लगभग समान हैं परन्तु वर्तनी के स्तर पर दोनों में स्पष्ट भिन्नता है। पालीवाल ने यहाँ दीर्घ स्वर 'ऊ' के लिए oo का प्रयोग किया और श्रीवास्तव ने ū का। परन्तु वर्तनी के स्तर पर दिखाई देने वाली इस भिन्नता की कोई निश्चित परिपाटी नहीं है। शब्दानुसार दोनों ही अनुवादकों की वर्तनी में भिन्नता दृष्टिगोचर होती है। किन्हीं स्थानों पर श्रीवास्तव द्वारा शब्दों में प्रयुक्त अक्षरों को अन्य स्थान पर पालीवाल द्वारा प्रयुक्त किया गया है अत: यह नहीं कहा जा सकता कि अनुवादकों ने किसी एक शैली का प्रयोग किया है।

इसी तरह भाषिक विश्लेषण की प्रक्रिया में एक अन्य तथ्य विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण रहा कि मूल कृति में अधिकतर वर्तमानकाल में कथा का वर्णन है परन्तु अनूदित कृतियों में वर्तमानकाल के विपरीत भूतकाल का प्रयोग किया गया है। इस प्रकार के प्रयोग के अन्तर्गत इस सिद्धान्त का पालन किया गया है कि प्रेमचन्द अपने समय की कथा लिख रहे थे अत: उनकी रचना की अधिकांश घटनाओं का वर्तमानकालिक क्रिया रूप में होना स्वाभाविक है। जबकि अनुवादकद्वय द्वारा इन्हीं घटनाओं को भूतकाल में लिखने का एकमात्र कारण यह है कि वह इसे समसामयिक रूप से प्रासंगिक बनाना चाहते हैं।

भाग और परिच्छेद की दृष्टि से अनूदित कृतियों की मूल कृति से तुलना उपरांत यह स्पष्ट हुआ कि मूल कृति के पाँच भाग और छप्पन परिच्छेद की तुलना में श्रीवास्तव ने अनूदित कृति को छप्पन अध्याय में तथा पालीवाल ने इक्कीस परिच्छेद में बाँटा है। इस प्रकार की विवेचना से यह तथ्य उभरकर सामने आया कि, जहाँ श्रीवास्तव ने सम्पूर्ण मूलकृति के अनुवाद का प्रयत्न किया है, वहीं पालीवाल ने कुछ महत्त्वपूर्ण कथाओं को छोड़ दिया, जिसके कारण अनूदित कृति पढ़ने वाले पाठकों को कथा-विच्छेद का आभास होता है।

इसी प्रकार भाषिक विश्लेषण की प्रक्रिया में यह भी दृष्टिगोचर हुआ कि प्रेमचन्द की लेखन शैली की महत्त्वपूर्ण विशेषता, उनके द्वारा प्रयुक्त विभिन्न प्रकार के शब्द यथा-तत्सम, तद्भव, देशज व स्थानीय, अरबी-फ़ारसी हैं। इस प्रकार के शब्दों के प्रयोग के द्वारा प्रेमचन्द ने कथा को सजीवता प्रदान की है परन्तु यही शब्द अनुवाद के बाद जब अनूदित कृति में आते हैं तब उनका वह प्रभाव नहीं दिखलाई पड़ता है।

तत्सम शब्दों का प्रयोग 'कर्मभूमि' में प्राय: पढ़े-लिखे संपन्न लोगों द्वारा बोले गये हैं तथा तद्भव, देशज व स्थानीय शब्द ग्रामीण परिवेश की कथा में प्रयुक्त किये गये हैं परन्तु अनूदित कृतियो में यह भिन्नता नहीं दिखती है। इस प्रकार के शब्दों के लिए दोनों अनुवादकों ने लगभग उसी पद्धती का अनुसरण किया है जिसका प्रयोग इन्होंने परंपरागत पदों के अनुवाद में किया है। 'शिक्षालय' जैसे शब्दों के लिए अनुवादकद्वय ने प्रभावधर्मी अनुवाद का प्रयोग करते हुए एक-सा अनुवाद प्रस्तुत किया है जैसे *educational institution*। 'संस्कार' जैसे शब्दों के लिए लोप पद्धति का प्रयोग किया गया तथा 'पुरुषार्थ' जैसे शब्दों के लिए लक्ष्य भाषा की विदेशी संस्कृति के अनुरूप अनुवाद किया गया, साथ ही ललित श्रीवास्तव द्वारा शब्दावली संग्रह में इस प्रकार के शब्दों की व्याख्या की गई जो विषम सांस्कृतिक व्यक्तियों के लिए बोधगम्य नहीं हैं।

'पुरबज' (पूर्वज), 'ब्याही' जैसे शब्दों के लिए श्रीवास्तव ने निजी संस्कृति के अनुरूप लक्ष्य भाषा में अनुवाद की पद्धति का प्रयोग किया है, जैसे- *ancestors, marriage.*

उपर्युक्त के अतिरिक्त अनूदित कृतियों के वाक्य में विस्मयादिबोधक संबंधी कुछ कमियाँ भी दिखाई पड़ी। इस प्रकार के शब्दों का अनुवाद या तो छोड़ दिया गया है या फिर शब्दश: अनुवाद किया गया है। जहाँ लक्ष्य भाषा में इनके समतुल्य शब्द मिल गये, वहाँ समतुल्य शब्दों द्वारा इनका अनुवाद किया गया है। अनुवादकद्वय द्वारा इसके लिए अपनी-अपनी अनुवाद शैली का प्रयोग किया गया है। पालीवाल ने 'अरे' जैसे विस्मयादिबोधक के लिए *O* का प्रयोग करके मूल कृति के भावों

को अक्षुण्ण रखने का भरसक प्रयास किया है जबकि श्रीवास्तव ने विस्मयादिबोधक वाक्य को प्रश्नवाचक वाक्य में बदलकर नवीन प्रयोग किया है।

उपरोक्त के अतिरिक्त मूलकृति में प्रयुक्त काव्य के अनुवाद के लिए पालीवाल ने लोप पद्धति का अनुसरण किया जबकि श्रीवास्तव ने शब्दानुवाद के द्वारा न केवल लय को बनाये रखने का प्रयत्न किया बल्कि उपन्यास की स्वाभाविकता को बाधित होने से बचाया। यद्यपि कहीं-कहीं कुछ विसंगतियाँ भी दिखलाई पड़ीं, जैसे एक ग़ज़ल की पंक्ति में आये 'वफ़ा' शब्द के लिए अनुवादक ने *devotion* शब्द का प्रयोग किया है। जिसका अर्थ भक्ति, श्रद्धा होता है जबकि 'वफ़ा' का प्रयोग ग़ज़ल की पंक्तियों में ईमानदारी ध्वनित हो रहा है। जिसके कारण ललित श्रीवास्तव का यह अनुवाद दोषपूर्ण हो गया है।

अनुवाद प्रक्रिया में भाषिक समस्या एक अहम समस्या है परन्तु संस्कृति संबंधी समस्याएँ अनुवाद की प्राथमिक समस्याएँ हैं, इस पर विचार किए बिना कोई भी तुलनात्मक अध्ययन पूर्ण नहीं हो सकता। इसीलिए चतुर्थ अध्याय के दूसरे भाग में संस्कृति संबंधी समस्याओं पर प्रकाश डाला गया और कुछ महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष प्राप्त किये गये। प्रथम, अनुवादक को सांस्कृतिक शब्दों के अनुवाद में सर्वाधिक कठिनाई का सामना करना पड़ता है, परन्तु विवेच्य अनूदित कृतियों के अनुवादकों के भारतीय मूल के होने के कारण सांस्कृतिक शब्दों की अच्छी समझ है जबकि ललित श्रीवास्तव कई वर्षों से कनाडा में रह रहे हैं। द्वितीय, अनुवादकों के पेशों का असर उनके अनुवाद को प्रभावित नहीं करता है। इस परिप्रेक्ष्य में देखने पर यह ज्ञात हुआ कि यद्यपि पालीवाल अनुवाद के क्षेत्र से सम्बद्ध हैं और कई वर्षों से अनुवाद का अध्ययन करा रही हैं तथापि इन्होंने बहुत प्रभावशाली अनुवाद नहीं किया जबकि श्रीवास्तव ने जैविक विज्ञान से जुड़े होने तथा कोई भी साहित्यिक पृष्ठभूमि न होने के बावजूद पालीवाल की तुलना में 'कर्मभूमि' की सम्पूर्ण कथा को संप्रेषणीय बनाने का प्रयत्न किया है। धर्म, रहन-सहन, खान-पान, रीति-रिवाज संबंधी बहुत सारे शब्दों का प्रयोग 'कर्मभूमि' में हुआ है। इन शब्दों के अनुवाद के लिए अनुवादकों ने पृथक्-पृथक् शैली का प्रयोग किया है तथापि कहीं-कहीं इन्होंने इस प्रकार के शब्दों और वाक्यों के लिए एक-सा अनुवाद किया है। 'छप्पर' के लिए अनुवादकद्वय द्वारा *thatched roof* का प्रयोग इसका उदाहरण है।

'मोटा कुरता' जैसे शब्दों के लिए पालीवाल ने जहाँ आंशिक लिप्यंतरण की पद्धति का प्रयोग करते हुये *thick kurta* अनुवाद प्रस्तुत किया है वहीं श्रीवास्तव ने लिप्यंतरण तथा व्याख्यापरक पद्धति को एक साथ प्रयुक्त करते हुए अनुवाद करने का प्रयास किया है।

इसी प्रकार 'चिकन की साड़ी' का लिप्यंतरण पालीवाल ने *chikan sari* किया तथा श्रीवास्तव ने *muslin sari,* जबकि *muslin* का अर्थ मलमल होता है। यहाँ श्रीवास्तव द्वारा सामान्यीकरण की प्रवृत्ति अपनायी गई, जिसके कारण अनुवाद त्रुटिपूर्ण हो गया है। ठीक इसी तरह 'निकाह' के लिए *wedding* तथा 'बारात' के लिए *wedding party* का प्रयोग करना श्रीवास्तव की सामान्यीकरण की प्रवृत्ति की तरफ़ संकेत करता है।

खान-पान संबंधी ऐसे शब्द जो बहुत ज़्यादा संस्कृतिनिष्ठ हैं, अननूद्य होने के कारण अधिकतर अनुवादकों ने उनका लिप्यंतरण किया है, जैसे-'चटनी', 'पूरियाँ', 'हलवे' के लिए क्रमशः *chutney, puris, halwa* का प्रयोग।

श्रीवास्तव ने 'फ़ाग', 'तुलसीदल' जैसे कुछ अन्य सांस्कृतिक शब्दों के लिए लिप्यंतरण का सहारा लिया तथा शब्दावली संग्रह में इसे व्याख्यात्मक रूप में समझाया। जबकि पालीवाल ने 'फ़ाग' का अनुवाद नहीं किया और 'तुलसीदल' का आंशिक लिप्यंतरण *tulsi leaves* करके इसे ज़्यादा संप्रेषणीय बनाने का प्रयत्न किया है।

यदि सांस्कृतिक शब्दों के अनुवाद में अधिकतर अनुवादकों ने लिप्यंतरण का प्रयोग किया तो इसका एकमात्र कारण इन शब्दों की अननूद्यता तथा अनुवादक द्वारा मूलकृति के प्रभाव को लक्ष्य भाषा में पहुँचाने की प्रतिबद्धता है।

सांस्कृतिक दृष्टि से लोकोक्तियाँ और मुहावरे बहुत सम्पन्न होते हैं यह मात्र भाषिक अभिव्यक्ति नहीं हैं बल्कि लोकोक्तियाँ और मुहावरे हमारी संस्कृति का हिस्सा हैं। 'कर्मभूमि' में सांस्कृतिक आग्रहों के कारण इनका प्रयोग हुआ है। अनुवादकद्वय ने अंग्रेज़ी में इनका अनुवाद करते समय अधिकांशतः शब्द और अर्थ की दृष्टि से समान मुहावरे और लोकोक्ति देने का प्रयास किया है। जहाँ अनुवादक को इस कार्य में सफलता नहीं मिली वहाँ उसने इनका शाब्दिक अनुवाद किया या फिर व्याख्यात्मक अनुवाद किया। यहाँ यह तथ्य भी दृष्टव्य है कि पालीवाल ने अधिकतर लोकोक्तियों और मुहावरों की अननूद्यता की स्थिति होने पर इनका अनुवाद नहीं किया है। श्रीवास्तव ने 'कर्मभूमि' की अधिकतर लोकोक्तियों और मुहावरों का अनुवाद किया है फिर भी उनके द्वारा अनूदित लोकोक्तियाँ और मुहावरे पालीवाल की तुलना में त्रुटिरहित नहीं कहे जा सकते हैं।

निष्कर्षतः 'कर्मभूमि' के अनुवादकों ने हिन्दी से अंग्रेज़ी में अनुवाद के दौरान, पाठ के अनुकूल अधिकांशतः शब्द और अर्थ की दृष्टि से समान अनुवाद प्रस्तुत किया है जहाँ अनुवादकों को शब्द और अर्थ की दृष्टि से लक्ष्य भाषा में समतुल्य शब्द नहीं प्राप्त हुए वहाँ उन्होंने भावपरक अनुवाद

किया। यदि इससे भी अनुवाद कर्म बाधित हुआ तो अनुवादकों द्वारा शब्द या वाक्य का लोप कर दिया गया। यह प्रवृत्ति रीतारानी पालीवाल में ज़्यादा दिखाई पड़ती है, जिसके कारण इनके द्वारा 'कर्मभूमि' का अंग्रेज़ी अनुवाद मूल कृति की प्रस्तुति प्रतीत होती है। जिसे पढ़कर पाठक 'कर्मभूमि' से सिर्फ़ परिचित हो सकता है न कि इस उपन्यास का पूर्ण रसास्वादन कर सकता है।

यदि पालीवाल द्वारा 'कर्मभूमि' के संक्षिप्तीकरण को नज़रअंदाज़ कर दिया जाय जो कि उनकी अनूदित कृति का सबसे बड़ा दोष है, तो पालीवाल तथा श्रीवास्तव कृत अंग्रेज़ी अनुवाद संतुलित और पठनीय है। स्मरण रहे, जबकि श्रीवास्तव का यह पहला ही साहित्यिक अनुवाद कर्म है जो पूर्णरूप से दोषरहित तो नहीं कहा जा सकता है परन्तु पाठक तक संप्रेषणीय होने के कारण प्रभावशाली है। यहाँ आलोचना के रूप में नहीं बल्कि सुझाव के रूप में कहा जा सकता है कि मूल के प्रभाव को अनूदित कृति में यथारूपेण पहुँचाने के लिए अनुवादक को मूल कृति के प्रति ईमानदार बनना पड़ता है। समग्र रूप से दोनों अनूदित कृतियाँ प्रभावशाली हैं परन्तु कहीं-कहीं ऐसा लगता हैं कि यदा-कदा अनुवादकद्वय का मार्ग से विचलन हो गया है। साथ ही,अनुवाद के बाद अनिवार्य पुनरीक्षण (स्वयं या किसी विशेषज्ञ द्वारा) के कष्ट से दोनों ने किनारा कर लिया है।

ग्रंथानुक्रम

आधार ग्रंथ -

कर्मभूमि : प्रेमचन्द, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्कण 2008,आवृत्ति : 2010

Karmabhoomi, Translated by Dr. Ritarani Paliwal, Frank Bros. & Co. , 2004

Karmabhumi, Translated by Lalit Srivastava, Oxford India, First published 2006,Second impression 2009

सहायक ग्रंथ -

प्रेमचन्द : क़लम का सिपाही , अमृतराय, हंस प्रकाशन 18, न्याय मार्ग, इलाहाबाद - 211001, प्रस्तुत संस्करण जनवरी 2005

प्रेमचन्द घर में : शिवरानी देवी प्रेमचन्द, रोशनाई प्रकाशन द्वारा प्रकाशित नवीन संस्करण : 2005

प्रेमचन्द : विविध प्रसंग, खंड 1 और 2 संकलन और रूपांतर अमृतराय, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1962

प्रेमचन्द और उनका युग : डॉ. रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पटना पहला छात्र संस्करण : 1993, चौथी आवृत्ति : 2006

भाषा और समाज : डॉ. रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पटना, इलाहाबाद, सातवाँ संस्करण : 2010

प्रेमचंद : (संपादक) सत्येन्द्र, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा. लि., नई दिल्ली 110002, पहला संस्करण : 1976, आवृत्ति : 2009

प्रेमचन्द : (संपादक) विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली -110002,

संस्करण : 2009

परम्परा का मूल्यांकन : डॉ. रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., नई दिल्ली - 110002, पहला सजिल्द संस्करण : 1981, संस्करण : 2009

अनभै साँचा : मैनेजर पाण्डेय, पूर्वोदय प्रकाशन 718, दरियागंज, नई दिल्ली -110002, प्रथम संस्करण : 2002

हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास : रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, अठारहवाँ संस्करण : 2005

प्रेमचन्द : अध्ययन की नयी दिशाएँ, डॉ. कमल किशोर गोयनका, साहित्य निधि, नई दिल्ली, 1981

प्रेमचन्द स्मृति, अमृतराय, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, 1959

प्रेमचन्द की प्रासंगिकता, अमृतराय, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, 1976

प्रेमचन्द का अप्राप्य साहित्य, डॉ. कमल किशोर गोयनका, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 1988

प्रेमचन्द : कुछ विचार, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद 1976

हिन्दी साहित्य का इतिहास, रामचन्द्र शुक्ल, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, संस्करण : 2005

हिन्दी साहित्य का उद्‌भव और विकास, हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, पटना, 2003

प्रेमचन्द : चिट्‌ठी-पत्री, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, 1976

प्रेमचन्द : एक कृति व्यक्तित्व, जैनेन्द्र कुमार, पूर्वोदय प्रकाशन, दिल्ली 1973

प्रेमचन्द : जीवन, कला और कृतित्व, हंसराज रहबर, आत्माराम एंड संस, दिल्ली, 1962

कमल का मज़दूर : प्रेमचन्द, मदन गोपाल, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1984

किसान, राष्ट्रीय आन्दोलन और प्रेमचन्द, वीरभारत तलवार, नॉर्दर्न बुक सेन्टर, नई दिल्ली, 1990

गोर्की और प्रेमचन्द : दो अमर प्रतिभाएँ, मदनलाल 'मधु', प्रगति प्रकाशन, मास्को, रादुगा प्रकाशन - 1987

गोदान नया परिपेक्ष्य, डॉ. गोपालराय, अनुपम प्रकाशन, पटना, 1991

प्रेमचन्द : रचना संचयन, (सम्पादन) निर्मल वर्मा, कमल किशोर गोयनका, साहित्य अकादेमी, प्रथम संस्करण : 1994, पुनर्मुद्रण : 2002, 2004, 2006

प्रेमचन्द के उपन्यासों में समसामयिक परिस्थितियों का प्रतिफलन, डॉ. सरोज प्रसाद, रचना प्रकाशन, 45 ए, खुल्दाबाद, इलाहाबाद

प्रेमचन्द : *सामन्त का मुन्शी,* डॉ. धर्मवीर, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2005

डॉ. अम्बेडकर - आत्मकथा अंश, डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर, अनुवादक एस. एस. गौतम, सिद्धार्थ बुक्स दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2007

भाषा, संस्कृति और समाज : (संपादक) डॉ. सोहन शर्मा, अभिकथन पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 1995

सांस्कृतिक विरासत व शिक्षा : डॉ. सत्या के. शर्मा, बाल भवन एंग्लो एकेडमी उदयपुर, 2005

भारतीय संस्कृति का स्वरूप : अमित कुमार शर्मा, कौटिल्य प्रकाशन, नई दिल्ली 2006

प्रेमचन्द : डॉ. प्रतापनारायण टंडन, सामयिक प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण : 1969

प्रेमचन्द : व्यक्तित्व और रचनादृष्टि : (संपादक) दयानन्द पाण्डेय, भावना प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण : 1982

दलित विमर्श की भूमिका : कँवल भारती, साहित्य उपक्रम, संस्करण : 2007

अनुवाद विज्ञान :-

अनुवाद-कला, डॉ. भोलानाथ तिवारी, प्रकाशक : शब्दकार, दिल्ली-110092, संस्करण: 1997

अनुवाद कला : सिद्धान्त और प्रयोग- डॉ. कैलाशचन्द्र भाटिया, तक्षशिला प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण : 1985

अनुवाद विज्ञान, संपादक डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली - 110002, संस्करण : 2007

अनुवाद विज्ञान, भोलानाथ तिवारी, किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण : 2007

काव्यानुवाद की समस्याएँ, (साहित्य का अनुवाद) भोलानाथ तिवारी, महेन्द्र चतुर्वेदी, शब्दकार, दिल्ली, द्वितीय संस्करण 1993

अनुवाद विज्ञान : सिद्धांत और अनुप्रयोग, (सम्पादक)डॉ. नगेन्द्र, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 1993

अनुवाद : सिद्धांत और समस्याएँ, रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव एवं कृष्णकुमार गोस्वामी, आलेख प्रकाशन, दिल्ली,संस्करण : 1985

अनुवाद कला : डॉ. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 1987

अनुवाद विज्ञान, डॉ. भोलानाथ तिवारी, शब्दकार, दिल्ली, 2002

अनुवाद की सामाजिक भूमिका, डॉ. रीतारानी पालीवाल, हिन्दी बुक सेन्टर, नई दिल्ली, 2003

अनुवाद प्रक्रिया और परिदृश्य, रीतारानी पालीवाल, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली-110002, संस्करण : 2004

काव्यानुवाद : सिद्धान्त और समस्याएँ, नगीन चंद सहगल, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, प्रथम संस्करण : 1991

Translation and Interpreting : Edited by Ravinder Gargesh, Krishna Kumar Goswami, Orient Longman, New Delhi-110002, 2007

The art of Translation, Theodore Savory, Cape Jonathan, Bend Ford Squr. London, 1957

Towards a science of Translating, E.A. Naida, E. J. Brill, Leiden, 1964

शब्द कोश :-

अँगरेजी हिन्दी कोश, फादर कामिल बुल्के, एस. चन्द एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली,
प्रथम संस्करण: 1968

Bhargava's Dictionary, Hindi-English, Publiser: Bhargava Book Depot, Chowk, Varanasi, 1989

वृहत् अंग्रेज़ी-हिन्दी कोश, सं. हरदेव बाहरी, ज्ञानमंडल लि., वाराणसी

व्यावहारिक हिन्दी-अंग्रेज़ी कोश, महेन्द्रनाथ चतुर्वेदी एवं भोलानाथ तिवारी, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली

शिक्षार्थी हिन्दी-अंग्रेज़ी कोश, राजपाल एण्ड संस, दिल्ली

Oxford Advanced Learner's Dictonary, Ed. Sally Wehmeir, Oxford University Press, Delhi

Webster's Third New International Dictonary, G and C Merrian co., Chicago

The Universal English Dictonary, Routledge and Kegan Paul Ltd. London

कहावत कोश : समर सिंह, राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट ,दिल्ली-110006, संस्करण: 2009

व्यावहारिक उर्दू-हिन्दी शब्दकोश, (सम्पादक) : डॉ. सैयद असद अली, राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली, संस्करण : 2010

वृहत हिन्दी मुहावरा कोश : (प्रधान संपादक) - डॉ. भोलानाथ तिवारी (सं.) डॉ. शशि प्रभा, डॉ. किरण बाला, साहित्य सहकार, दिल्ली - 110051, द्वितीय संस्करण: 1993

अंग्रेजी-हिन्दी मुहावरा लोकोक्ति कोश, (सं.) भोलानाथ तिवारी, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली

हिन्दी-अंग्रेज़ी मुहावरा लोकोक्ति कोश (सं.) कैलाशचन्द्र भाटिया, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली

हिन्दुस्तानी कहावत कोश, (सं.) कृष्णचन्द गुप्त, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली

हिन्दुस्तानी मुहावरा कोश : ए. एस. फैलन, पुनर्प्रकाशन, नेशनल बुक ट्रस्ट, दिल्ली, 2006

पत्र-पत्रिकाएँ :-

सरयूधारा, सम्पादक डॉ. शैलेन्द्र कुमार त्रिपाठी, प्रेमचन्द अंक, अंक 25, 2007

नया ज्ञानोदय, सम्पादक : रवीन्द्र कालिया, प्रकाशन भारतीय ज्ञानपीठ,अंक 92,अक्टूबर 2010

अनुवाद (त्रैमासिक) भारतीय अनुवाद परिषद, नई दिल्ली

लमही, (त्रैमासिक) (संपादक) : ऋत्विकराय, लखनऊ

सूचना प्रौद्योगिकी :-

www.sfu.ca/biology faculty/ srivastava

srivastava@sfu.ca

djwa@sfu.ca

www.ignou.ac.in/ ignou / about ignou / school …….. ritarani paliwal

www.rrpaliwal@hotmail.com